



# रहीम-सतसई

[ मूल, टीका व भाषाानचना ]

बिखम्बर 'अरण' एम० ए०

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

प्रकाशक  
विनोद पुस्तक भण्डार  
हॉस्पिटल रोड भागला

प्रथम संस्करण  
सन् १९६२  
मूल्य  
१ ३०

मुद्रक  
कैलाश प्रिंटिंग प्रेस  
बाग मुकपकर गां भागला

श्रीही बन्धुवर

रामकृष्ण अप्रवाल एम० ए०  
को सप्र म



## भूमिका

कबीर सूर

घोर तुलसी के बाद हिन्दी भाषा भाषी लोको में रहीम ही सबसे अधिक भोक्-  
त्रिम कवि हैं। रहीम की लोकप्रियता का कारण जीवन के व्यावहारिक पक्ष  
की सहृदयता, न्याय एवं न्यायिक अनुभूति है। तुलसी सूर आदि की महत्ता उच्च  
सांस्कृतिक नायकताओं तथा काल की उच्च स्तरीय अनुभूति पर अवलम्बित है  
इसके लिए उत्कृष्ट सांस्कृतिक बल एवं कला-व्यक्तता की आवश्यकता है। जनसाधार-  
ण में वह बुलन्द वस्तु है। जनता के हृदय को तो व्यवहार जीवन की प्रति-  
बिम्ब की अनुभूतियाँ ही अधिक स्पर्श कर पायी हैं। यही कारण है कि नीति-  
सम्बन्धी सुक्तियाँ जन सामान्य का मनोरञ्जन भी करती हैं। घोर-भार्य प्रदर्शन  
भी। रहीम की नायिका श्रेष्ठ आदि की रचनाओं में कम महत्त्वपूर्ण नहीं है पर  
जनता के हृदय में तो रहीम अपनी नीति-सम्बन्धी सुक्तियों के माध्यम से बैठ  
पाये हैं। मुझे आश्चर्य है कि मेरे दिमाग में वे इस सत्य का साक्षा-  
त्कार किया है। रहीम के नीति वाक्यों में निहित जीवन की सहृदय एवं  
न्यायिक अनुभूति को आलोचना के टीका द्वारा सामान्य साहित्य के रसिकों  
तथा विद्वानों के लिए सुलभ करने का उनका यह प्रयास स्तुत्य है।

इसमें उन्होंने

अनेक अस्पष्ट रचनाओं की संशुद्धि करके अपनी मूल्य का भी परिचय दिया है।  
आलोचना नाम में भी उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण बातों पर बिहतापूर्व प्रकाश  
दाला है। रहीम सतसई के सटीक एवं विद्यापीथयोगी संस्करण की आवश्यकता  
भी थी। उन्नीसवाँ की पूर्ति यह अन्य कर रहा है। मेरा विश्वास  
है कि हिन्दी-साहित्य तथा विशेषतः विद्यापीथ समाज इससे लाभान्वित होगा।

हिन्दी-विभाग

आचार्य अमर आनन्द

डा० अणपत्सवदय मिश्र



# जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

## जीवन-परिचय

मुगल सम्राट अकबर के नवरत्नों में से एक रत्न के रूप में रहीम ने न केवल मुगल दरबार में क्वालि घबित की अपितु जनसाधारण में भी वे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त करने में समर्थ हुए । मुगल सम्राट और सामन्तों के बीच यदि वे अपने शासकीय प्रतिभा और धैर्यपूर्ण कार्यकलापों से प्रिय हुए तो जन साधारण में स्वरचित नीतिपूर्ण बोहों और कुटीले बरबों के कारण लोकप्रिय हुए । मध्यकाल की उन विभूतियों में रहीम भी एक हैं जिन्हें इतिहास के पाठकों के घतिरिक्त साधारण जनता भी बधुबी ही जानती है । हिन्दी साहित्य में वे कबीर सूर और तुलसी ने कम लोकप्रिय कवि नहीं हैं । उनकी कविता से निरखर और घामीण जनता में भी लोकप्रिय है । घाये हन इन्हीं लोकप्रिय कवि का जीवन-परिचय प्रस्तुत करेंगे ।

माता पिता—रहीम का पूरा नाम यशु रहीम खानखाना था । वे तुर्क मान (साधार) जाति के थे । उनके पूर्वजों का घादि निवास स्थान कंसियन नागर तथा घरन की तनहरी में करारूम रेविस्ताग के घासपास था । उनके पिता का नाम बरमसा था । बरमसा ने यमनी से घाकर सोलह बर की उम्र में भारत के प्रथम मुगल शासक बाबर के यहाँ नीकरी की । यमनी



योग्यता और वचकम से बराबर वह परोपनि करता रहा । बाहर के सतरा धिक्कारी हुमायूँ के समय भी वह शाहक का विश्वासपात्र सहायक रहा और राज्य के महत्वपूर्ण कार्यों में सदा भाग लेता रहा । हुमायूँ की मृत्यु होने पर बीरमल्ल ने चौदह वर्षीय राजकुमार अकबर को मुगल सिंहासन पर बैठाया और स्वयं उनका संरक्षक बन राज्य कार्य को सुचारु रूप से चलाया । रहीम की माता मेवात के अमातियों की पुत्री थी । अमातियों के पुत्र राजपूत थे और उन्होंने कालांतर में इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था । अमातियों की बड़ी मदद से हुमायूँ का विवाह हुआ था और छोटी लड़की का विवाह बीरमल्ल से हुआ । रहीम का पिता सत्य राजबीरिन्द्र और पट्ट खेमानायक तो था ही साथ ही फसायिबी और कवि भी था । रहीम को बलाप्रियता ज्यों पराक्रम वृद्धपिता धारि मुख धवन निता से वीरक सम्पत्ति के रूप में मिले थे । हिन्दू धर्म के प्रति प्रेम, धर्मवोचित साहस धारि बुण माता से प्राप्त हुए थे ।

जन्म—जब बीरमल्ल धारिकछाह के हिन्दू तैमापति हेमू से जुड़ करने के लिये पानीपत की ओर बढ़ा था तो मार्ग में उसकी अवविवाहिता ममवती पत्नी थी थी । मेदिन धर्म में ही अपनी पत्नी को उसने लाहौर कैलास के लिये भेज दिया । पानीपत के द्वितीय युद्ध में हेमू को पराजित करने के बाद जब वह सिक्खर नूर के उपवन बसाने के लिये अकबर के साथ बंगाल की ओर प्रस्थान कर रहा था तो उसी बीच लाहौर में बीरमल्ल की पत्नी ने १७ दिसम्बर १२१९ ई० को रहीम को जन्म दिया । युद्ध के लिये मार्ग के बीच वह अमाचार बीरमल्ल तथा मुगलों ने अत्यन्त दुःख समझा । बीरमल्ल को सभी ज़ीला के परवान् बूझावस्था में पुनः राज्य की प्राप्ति हुई थी परन्तु उसके हर्षोन्माद का तो बार ही न रहा । रहीम के जन्म पर मुगलों में श्रद्धा उत्पन्न मनाये गये । रहीम के दो प्रारम्भिक बार वर्ष बड़े ही साहस्यार और वैभव में बीते ।

निर्वाह—मेदिन बीरमल्ल के बढ़ते हुए प्रभाव से मुगल दरबार के अनेक साधन बनने लगे और सब अकबर भी धारणित रहने लगा । इस का फल अनुकूल न देख बीरमल्ल अपनी पत्नी और बार वर्षीय पुत्र रहीम को जंगल

हुज के लिये मक्का की ओर बस पड़ा लेकिन मार्ग में पाटन में एक पठान ने उसका बन्ध कर डाला । इस प्रकार रहीम चार वर्षों की उम्र में ही पिता के सम्राज में समर्पित हो गये । अकबर ने १५६१ ई० में रहीम को अपने पाठ बुलवा लिया और उसकी शिक्षा-दीक्षा का राज्य की ओर से प्रबन्ध किया । अम्बिबान के मौलवी मुस्ता मुहम्मद अमीन रहीम के शिक्षक थे उनसे रहीम ने अरबी फारसी और तुर्की की शिक्षा प्राप्त की । इसके अतिरिक्त रहीम ने संस्कृत तथा हिन्दी का ज्ञान भी प्राप्त किया । अकबर के दरबार में राजा टोडरमल बीरबल कवि जंग जैसे हिन्दी के कवि और ममज भी थे इनके अतिरिक्त संस्कृत के अनेक विद्वान भी उसके दरबार की धोमा बढ़ाते थे । अतः इनके साहचर्य में रहीम का संस्कृत तथा हिन्दी की ओर झुकाव होना स्वाभाविक ही था । अपनी प्रतिभा और योग्यता के बल पर रहीम ने बाल्य अरबी फारसी में ही असाहज ज्ञान प्राप्त नहीं किया था अपितु उसका संस्कृत का साम्प्रदायिक ज्ञान भी किसी संस्कृत के पण्डित से कम न था । द्विपद के सुप्रसिद्ध कवि तुलसीदास ने अपने ग्रन्थ 'बंघ मास्कर' में रहीम के संस्कृत के ज्ञान की प्रशंसा करते हुए उसे भोज के समान बताया है । रहीम ने हिन्दुओं के धर्मग्रन्थों का पठनार्थ भी सभी माँति किया था । यही कारण है कि उनकी कविताओं में उनके पूज्यवर्ती कवि जायसी की माँति नहीं पौराणिक त्रुटि नहीं मिलती । हिन्दी के वे ऐसे प्रथम महत्त्वपूर्ण कवि थे जिन्हें हिन्दू धर्म और संस्कृति का एक हिन्दू की माँति ज्ञान था ।

**पारिवारिक जीवन**—रहीम ने अपने सम्राज्यारण पुत्रों से शीघ्र वास्त में ही युवस सन्नाह अकबर को समर्पित कर दिया था । अकबर पहले ही उनके पिता की योग्यता को देख चुका था अतः उनके पुत्र रहीम की योग्यता के सम्बन्ध में वह बहुत कुछ विरक्त था । लेकिन बीरमल का पुराना छन्द रहीम की इस उम्रि पर बसता था । अकबर ने उनकी ईर्ष्या को समाप्त करने के लिये इस रत्न के अमूल्य अमीर मिर्जा अजीज कोका की बहुत माहवानो बेयम से रहीम का विवाह कर दिया । अजीज कोका बादशाह की घाय का बंटा होने के कारण दरबार में अत्यन्त प्रभावशाली था । माहवानो बेयम अत्यन्त मृगीय और नृगर स्त्री थी । रहीम की बीसे और भी बेयमों थी लेकिन प्रधान बेयम

माहबानो ही रही। माहबानो के रहीम को तीन पुत्र रत्न घोर दो पुत्रियाँ प्राप्त हुईं। दो बड़े पुत्र इरीन घोर हाथब अपने छोटे घोर परछम से ताड़कों के लदेव प्रियपाव बने रहे। लेकिन ये दोनों ही पुत्र घसमय ही पिता के सामने काम कमलित हो गये। बड़ा पुत्र तीसीस वर्ष की अवस्था में प्रात्यमिक महरापाव से भर गया घोर दूसरा पुत्र महावतली द्वारा मार गया। तीसरा पुत्र करन जी वर्ष की अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। रहीम की एक लड़की जाना बेचम भकबर के पुत्र बानिपाल को व्याही गई घोर दूसरी का विवाह 'करहम जहाँबीरी' के सेठक के पुत्र बीर जमीनुद्दीन से हुआ था। किन्तु दोनों ही पुत्रियाँ मोड़े ही समय परचाव विधवा हो गई। रहीम की प्राय पत्नियों क भी तीन पुत्र थे जिनमें से एक अवचन मही मर गया था। कुल बित्ताकर रहीम का पारिवारिक जीवन घत्यन्त सुखर घोर सफल था। लेकिन बाद में पुत्रों के नियम और पुत्रियों के वैश्य से उसे कष्ट भी कम नहीं हुआ।

राजनीतिक जीवन—रहीम का सारा जीवन राजनीति में ही बीता। भवबर ने प्रारम्भ में ही रहीम को राजनीति की भी पिता दी थी। वह दर बार में रहीम को अपने साथ रलता था बीर बाहर जाते समय भी उसे अपने लंग में बाठा था। भवबर ने रहीम को सबसे पहन सन् १५१३ में मुजरात में बाहरवती के पास के मुठ में मेना के मध्य भाग का नायक बनाया था। सेना के सम्मन्ध का हैनानायक होना घत्यन्त वीरव की बात थी। सपह वर्ष की अवस्था में ही रहीम ने इन महत्वपूर्ण पर को बड़ी योग्यता और कुशलता से निभाना। इन मुठ में मुगलों की ही विजय हुई। बीस वर्ष की अवस्था में रहीम को मुजरात का प्रमानक बना दिया। वह भी कम वीरव घोर सम्मान की प्राप्त नहीं थी। रहीम की घनार प्रातमा और घनार योग्यता के बल पर ही भवबर ने वह महत्वपूर्ण पर छोड़ा था। इनके बाद तो रहीम घनेक बार भवबर और जहाँबीर के समय बलिग के तथा बीर भी ज्ञानों के प्रमानक निमुक हुए जनेक महत्वपूर्ण मुठों के नेगारि भी बने। अपने जीवन में अतिव जितों की लोभ कर के राजनीति में गृध सजग रहे। उनकी प्रमानकीय योग्यता,

सैन्य संचालन की कुशलता और राजनीतिक पदुषा का बोझा तत्कालीन बड़े बड़े सामन्त और स्वयं मुगल शासक अकबर और जहाँगीर भी मानते थे ।

मृत्यु—एहीम ने कितना सुख सम्मान और वैभव अपने जीवन काल में पाया जीवन के अन्तिम दिनों में उससे कम कष्ट नहीं पाया । उसकी प्रधान बंगम माहबानों से उत्पन्न पुत्र करन तो नौ वर्ष की आयु में पहले ही मर गया था अन्य पत्नी से उत्पन्न उसका प्रिय पुत्र हैदरी भी दुर्घटना वस्तु हो असमय ही मर गया । उसकी जीवन संपत्ति प्रधान वैभव माहबानों भी हैदरी की मृत्यु के तीन दिन पश्चात् खल बसी । दोनों पुत्रियाँ भी असमय ही विधवा हो गईं । बड़ा पुत्र अत्यधिक मदिरापान से तथा छोटा पुत्र महारतनों के बच से असमय ही काल कपलित हो गये । बीच-बीच में पश्च्युत होने तथा बागीर क्षिप्त जाने के कारण उसे मुगल शासक जहाँगीर द्वारा अपमानित भी होना पड़ा । इन सब असह्य घावों ने उसके बृद्ध शरीर को और भी अधिक बर्बर बना दिया । यद्यपि अन्त में जहाँगीर ने उस समा कर दिया और एक लाख रुपये तथा कस्बीय में बागीर भी लेकिन उसका दिल तो टूट चुका था । फलतः अब नूरजहाँ ने महारतनों के बिरोह के बमन के बिदे एहीम को सिन्धु पार भेजा तो बीच में साहीर में ही बीमार पड़ गया । बीमारी की दशा सुखछो न देख उसे दिल्ली लाया गया । और दिल्ली में ही सन् १६२७ में ७२ वर्ष की उम्र में उसका देहावसान हो गया । एहीम ने पहले से ही हुमायूँ के मकबरे के पास अपने लिये मकबरा बनवा रखा था उसी में उसे दफना दिया गया । दिल्ली में यद्यपि वह मकबरा अब बर्बर हो चुका है लेकिन अपने साहित्यिक छलित्व के कारण उसकी कीर्ति अक्षय है ।

### व्यक्तित्व

अपने समय में एहीम बहुत प्रभावशाली व्यक्तियों में एक माने जाते थे । असाधारण राजनीतिक बसता और प्रतिभा के कारण उन्होंने अपने व्यक्तित्व को अत्यधिक प्रभावशाली बना लिया था । वे बहुमुखी प्रतिभा का जीवन थे । एक साथ ही वे कुशल राजनीतिज्ञ शीघ्र प्रसाधक और भीर सेनापति थे तो

इसके साथ ही वे मातृक कवि गम्भीर पालक कृपण अनुवादक बहुभाषा विद्वान् और साहित्य समंज भी थे । इतना होने पर भी वे उदार हृदय इंसान थे । हीन-गुणियों का दुःख एवं उनसे नहीं रखा जाता या कमजोर भाषकों को किसी भी दशा में बाध नहीं लाते थे । सुगी होने के साथ-साथ वे गुली वनों का घाटर करने वाले भी थे । मय कवि के एक ही अन्ध पर कुछ होकर उन्होंने साठ लाख रुपये पुरस्कार में दे दिये थे ।

राजनीति में उनकी भाव कुछ समय के बड़े-बड़े भावनों और राजकुमारों, सरकार तथा बर्खाशीर बादशाह तक फैली थी । सत्य संवत्सर्ग उनकी योग्यता अपूर्व थी ही प्रान्तों के ध्यान में धर्मपति के रूप में भी उनकी अपनी प्रसाधारण योग्यता का परिचय दिया । कुबरात तथा इतिहास कई-कई बार प्रान्तपति तथा धर्मपति के रूप में नियुक्त हुए ।

मुख्य सामक परिवार में उन्हें सदैव सम्मान दिया । अनेक पुरस्कार और बड़ी-बड़ी खीरों से उन्हें मिली थी—वैवाहिक सम्बन्धों के कारण भी वे मुख्य सामक के परिवार के काफी निकट रहे । उनकी मौनी मुख्त बादशाह हुमायूँ की धात्री थी । स्वयं उनकी प्रधान वैधवा सरकार के बाप पुत्र की लड़की थी । सरकार के पुत्र राजिपाल का उनकी एक पुत्री ध्याही । मनीष के एक पुत्र तुमरा से उनकी लीली तथा दूसरे पुत्र तुर्क (बाद में बादशाह) ने उनकी पोती का विवाह-सम्बन्ध हुआ । सरकार के पुत्र मनीष के से संतान तथा पुत्र भी थे । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मुख्य परिवार से उनके बड़े सम्बन्ध रहे और इन सबका कारण उनकी अनाधारण योग्यता और ब्रह्मचर्यानी व्यक्तित्व ही था ।

वैधवा प्रथम उदार और मातृकहृदय थे । उनका लक्षण और परिचय करने की भावना कुछ-कुछ बर बरी थी । भयावी भी वे बटन थे । इन्हीं गव वारणों ने वे धरने जीवन में प्राप्त गुरुव रहे । राजनीति बड़े-से-बड़े ध्येय को अपने हृदय में मान ली है । राष्ट्रीय भी राजनीति की गम्भीर से न बच सके । अपने जीवन में उन्हें भी एक बड़ा न गहरा कभी कभी मना

पड़ा यद्यपि इसके लिये उनकी आत्मा बिलकावती रही । जीवन के अंतिम दिनों में तो वे कुरान को साक्षी मानकर कूर्म की लिये गये बचन तक का निर्वाह न कर सके फलतः कुछ स्वार्थ से प्रेरित होकर जीवन के महान आध्यात्मिक मूल्यों को ठुकरा दिया । जर्जर पत्नी और पुत्रों के सामयिक निबन के आभाव कठिन और विषम परिस्थितियों और जर्जर वृद्धावस्था से उनका व्यक्तित्व अन्त में टूट कर बिखर सा गया था । फलतः उसमें वह तेजस्विता नहीं रह गई थी जिसके धाये अनेक विभूतियाँ गत मस्तक हो जाती थीं । समय बड़ा प्रबल है वह किसे नहीं छोड़ देता वह किसे नहीं झुका देता । समय का यही प्रहार रहीम पर भी पड़ा था । फिर भी रहीम का व्यक्तित्व मध्यकाल के सासकों से इतर व्यक्तियों से कम प्रखर और प्रभावशाली नहीं था ।

## साहित्य साधना

रहीम का जीवन अधिकोद्यत राजनीतिक उलझनों और झुझों में बीता था । अतः साहित्यसेवा के लिये उनके पास अवकाश बहुत कम था फिर भी अपने अत्यधिक व्यस्त जीवन में से भी वे साहित्य के लिये पर्याप्त समय निकाल लेते थे । वे अन्य कवियों और लेखकों की रचनाएँ बड़े ध्यान से सुनते एवं पढ़ते थे तथा कवियों को नुब सम्मान देते थे । गंग क एक अल्पवय पर ३६ साल देना तो प्रसिद्ध है ही अपने समय के सभी प्रसिद्ध कवियों और विद्वानों से उनके मधुर सम्बन्ध थे । इसके साथ ही स्वयं रहीम ने पर्याप्त परिमाण में साहित्य का मूलन किया है । विद्वानों के अनुसार रहीम रचित ग्रन्थों की सूची इस प्रकार है—

(१) होहावली अथवा सतसई (२) नदर बोमा (३) बरबी नायिका मेर (४) बरबी (५) मरनाष्टक (६) गूज़ार सोरठा (७) रहीम काव्य (८) डेट कौतुकम् और (९) फुटकर खम्ब ।

इनके अतिरिक्त कुछ विद्वानों के मतानुसार “रासर्पनाम्नावी” नामक काव्य ग्रन्थ के रचयिता भी रहीम थे किन्तु यह कृति अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी है । फारसी में भी रहीम ने बीजान लिखा था जो उपलब्ध नहीं हो सका है ।

फारसी में रहीम द्वारा रचित कुछ अन्य ग्रन्थों प्राप्त होते हैं इनकी फारसी में रचित रचनाओं के कुछ उदाहरण "मुकुटे बहोबोरी" "हस्त-कसीम" तथा "मघासिरे रहीमा" तथा ये विद्यते हैं। तुर्की में लिखित भाबर की भात्मकता "मुकुटे बहोबोरी" का रहीम ने फारसी में अनुवाद किया था जिससे सम्राट अकबर बड़ा प्रसन्न हुआ था और रहीम को एक धामीर दी थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि रहीम ने अपने व्यवहृत राजनीतिक में से भी समय निकाल कर विपुल परिमाण में महत्वपूर्ण साहित्यिक ग्रन्थों की रचना कर ली।

## रहीम का नीति काव्य

नीतिकाम्य का स्वरूप— नीति' शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की 'नीति' शब्द से सम्बन्धित मानी गई है। 'नीति' का अर्थ है। 'आगे ले जाना' 'अतः' 'नीति' शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ ही है 'आगे ले जाना' अथवा 'प्रगति'। सृष्टि के इतिहास में 'विकास' का बड़ा महत्त्व रहा है। मानव का इतिहास तो आबिकाम से बिकासवात् रहा है और यह विकास आगे की ओर' या प्रगति' सूचक ही रहा है। यह कथन अतिमय न होना कि मानव-जीवन में 'प्रगति' का बड़ा महत्त्व है और वृत्ति मानव स्वभावतः 'प्रगति' का प्रेमी है, अतः 'नीति' का उससे मिले सर्वाधिक महत्त्व है। समस्त समाज 'नीति' का आत्मधन लेकर ही प्रगति कर सका है। आज भी कर रहा है और भविष्य में भी कर रहा होगा। नीति से बिहीन मानव-समाज का संभालन सम्भवनाशील है। 'सुश्रुतीतिहार' नामक नीतिशास्त्र के प्रसिद्ध श्लोक में नीति की महत्ता के बारे में स्पष्ट लिखा है—'विषय प्रकार भोग के बिना प्राणियों की वैहस्वित नहीं होती उची प्रकार नीति के बिना लोक की व्यवहार स्थिति नहीं होती।' अतः बिना 'नीति' का मानव-जीवन में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान है अथवा इससे मानव मानवार्थों का प्रतिनिधित्व करने वाला काम्य कैसा प्रयुक्त रह सकता था ? बहुत बड़े प्राचार्यों और कवियों को जोड़कर सभी ने काम्य में 'नीति' को अत्यन्त आवश्यक माना है। यही कारण है कि हमें प्रायः सभी महापुरुषों



कवियों के काम में नीति के स्वर सुगठित हुए हैं। प्राचीन महाकवि बहूँतमर्ष ने तो स्पष्ट ही प्रत्येक महाकवि को नीति का पित्रक माना है—

"Every great poet is a teacher I wish to be either considered as a teacher or as nothing at all

पाश्चात्य साहित्य शास्त्री बायस का प्राण "सीर्य को मानते हैं और Murrey सीमर्य-सत्य को नीति पर आधारित मानते हैं—

"Moral nihilism in Literature involves an aesthetic nihilism "

हिन्दी के कविहर मैथिलीछरण कुत ने भी एक स्थान पर लिखा है—

"केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिये ।

उसमें उचित उपदेश का भी मम होना चाहिये ।"

किन्तु कुछ ऐसे भी कवि और आचार्य हुए हैं जो काव्य या साहित्य में नीति का होना आवश्यक नहीं मानते । इस मत के प्रबल समर्थक जॉर्ज एलियट के प्रसिद्ध कलाकार चोस्टर चाइल्ड अपने उपन्यास "The Picture of Dorian Gray" की भूमिका में लिखते हैं—“साहित्य कला में नैतिकता कला के अनेकता का अंग ही नहीं उठता क्योंकि इन दोनों का क्षेत्र एक दूसरे से सर्वथा पृथक् है ।” पाश्चात्य समीक्षक जोन और ब्रिडगे भी इसी मत के समर्थक हैं । कुछ पश्चाद्वारी समीक्षक भी इस मत की पुष्टि करते हुए साहित्य को केवल समाज का अर्थ चित्रण करने वाला ही मानते हैं । किन्तु यह मत मान्य नहीं हो सक्ता । यह ठीक है कि कलाकार कला साहित्यकार नैतिकता के बाहरी दबाव से प्रेरित होकर उत्कृष्ट कला कला साहित्य सृजन नहीं कर सक्ता । जब उसका हृदय आकाश को लम्बान नहीं पाता तो धरती की सतह के आदि के माध्यम से प्रकट करता है और तब उत्कृष्ट कला का सृजन होता है । लेकिन यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि कला कला साहित्य हृदयजनित भावों का स्फुरण होने हुए भी सामाजिक नीति अपना साराधार या बिरोधी नहीं होता क्योंकि कलाकार या साहित्यकार का व्यक्तित्व समाज के तारों से ही संपर्कित होता है—समाज से पृथक् उसके व्यक्तित्व के निर्माण की कल्पना अशक्य है और कला कला साहित्य कलाकार कला साहित्यकार

के व्यक्तित्व का ही प्रतिफलन हो है। उसकी कृति में कम या अधिक उस सामाजिक नियमों नीतियों एवं सवाचारों का विमर्शन अवश्य मिलेगा जिनके बीच उसका जीवन व्यतीत हुआ है और उसका व्यक्तित्व बना है। इतना अवश्य है कोई साहित्यकार अपने साहित्य में स्पष्ट होकर नीति का वर्णन करता है जबकि अन्य साहित्यकार नीति-वर्णन की ओर उन्मुख नहीं होता। फलतः उसका साहित्य स्पष्ट रूप से देखने पर विभूत साहित्य मान लबटा है किन्तु सूक्ष्म रूप से उसका पर्यवेक्षण करने पर ऐसे साहित्य में भी नीति का वर्णन अवश्य मिल जाता है चाहे वह कला के आधारों में ही क्यों न हो।

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है लेकिन साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब दिखाने वाला दर्पण मात्र ही नहीं है अपितु वह समाज का मार्ग दर्शन कराने वाला प्रकाश स्वयं प्रदीप भी है। साहित्यकार फोटोग्राफर की भाँति केवल समाज की तस्वीर बीच कर ही नहीं रह जाता अपितु वह यह भी बताता है कि समाज की एक अच्छी तस्वीर कैसे बन सकती है। यह दूसरा स्वयं ही साहित्य को नीति के निकट ला देता है इस उच्च को ध्यान में रखते ही एक पाश्चात्य विद्वान ने काव्य में नीति को अनिवार्य माना है—

*"The essential theme of poetry is moral order"*

जेटो ने नीति से विहीन कला की निन्धा की है और मैथ्यू आर्नल्ड तो काव्य में नीति का होना परमावश्यक मानता था। सुप्रसिद्ध कथाकार रॉसस्ताय तो नीतिबुद्ध कला के प्रबल समर्थक थे। पाश्चात्य समीक्षक एस्किन भी नीति बुद्ध कला के बड़े भारी पक्षपाती थे उन्होंने एक स्थान पर स्पष्ट लिखा है— "कलाय नान्य के लिये अपेक्षात्मक होनी चाहिये क्योंकि अपेक्षा ही उनका अरथ लक्ष्य होता है।

किन्तु बीसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है साहित्य में सर्वत्र स्पष्ट रूप से नीति का वर्णन नहीं मिलता। ऐसा साहित्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है जो नीति को कला के प्रबुद्धन में निहित रखता है। साहित्य नीतिसाध्य बनना बर्ण सास्त्र नहीं है जो मात्र नीति प्रबन्ध उपदेश का प्रकाश करे अपितु साहित्य तो इन सबको लेकर भी एक पूरक वस्तु है। यद्यपि नीति या उपदेश ऐसी काव्योचित चीज़ें हैं

धर्मव्यक्त किया गया हो जो सरस एवं मार्मिक हो तो ऐसी शक्ति ही काव्य की परिधि में आ सकेगी । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि काव्य का मुख्य मानव-जीवन का चिन्तन करना तो है ही साथ में मानव-जीवन की प्रगति के लिये उसका मार्ग-दर्शन करना भी उसका मक्य है । कुछ काव्यों में नीति-तत्त्व या तो छिपा रहता है या सीधे रूप में रहता है लेकिन कुछ काव्यों में नीति तत्त्व स्पष्ट होता है और ऐसे काव्यों के रचयिताओं का ध्येय ही नीति वा उपदेश को काव्य के माध्यम से पहुँचाना होता है । इस प्रकार के काव्य को 'नीतिकाव्य' की संज्ञा दी गई है । वैसे कि ऊपर प्रतिपादित किया जा चुका है कि नीतिकाव्य में नीति का प्रतिपादन होने पर भी उसमें काव्योचित सरसता सरलता और मार्मिकता होनी चाहिए । अतएव नीतिकाव्य में निम्न कुछ बातें होना आवश्यक है—

१. उसमें किसी नीति या उपदेश का वर्णन हो
२. कथन में विविष्टता हो अर्थात् नीति या उपदेश इस चमत्कार पूर्ण ढंग से वर्णित किया जाये कि मन भर उसका प्रभाव पड़ सके
३. भाषा सरल स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण हो तथा
४. कथन में स्पष्टता तथा प्रभावोत्पादकता लाने के लिये समूचे दृष्टान्त या उदाहरण का प्रयोग होना चाहिये ।

हिन्दी में नीतिकाव्य—भारत लंबे से नीति को महत्व प्रदान करने वाला देश रहा है । भारत में नैतिक ज्ञान का इतना सम्मान रहा है नीति धर्मों को शासन की संज्ञा दी गई है । काव्य काव्य तो किसी विशेष तत्त्व का ही प्रतिपादन करने के कारण प्रत्येक अनुपम के लिये उठने लायक नहीं होने जिसका कि नीतिशास्त्र । इसलिये 'शुक्लनीतिशार' के प्रथम अध्याय में कहा है कि—“नीतिशास्त्र सब अनुपमों के लिये उपपायी, अर्थात् विधावक धर्म-धर्म-वाम-भूल निवर्तक हेतु भूल एवं मोक्षप्रद है ।” यही कारण है कि भारतीय कवीन्द्रियों की दृष्टि मदैव नीतिपरक रही है । यहाँ के काव्य में इमीनिये सरा से नीति-तत्त्व की प्रधानता रही है । भारत का प्रायःप्रत्येक महान् कवि न केवल महान् कलाकार या धार्मिक धारक मन्त्र के निर्माण के लिये मार्गदर्शन

नीतिक विषयों का प्रतिष्ठापक भी था। यहाँ के काव्यों के मूल में तो नीति या उपदेश का सन्निवेश तो होता ही है साथ में नीति का स्पष्ट प्रतिपादन करने वाले स्वतन्त्र नीति काव्य ग्रन्थों की रचना भी प्रचुर परिमाण में हुई है। पारबाल्य विद्वान Winternitz इसीनिवे भारतीय नीतिकाव्य को नीतिकाव्य की दृष्टि से विश्व का सर्वश्रेष्ठ काव्य माना है—

"In one department of literature, that of the aphorism (gnomic poetry) the Indians have attained a mastery which has never been gained by any other nation."

संस्कृत का नीतिकाव्य इस दृष्टि से विशेष समृद्ध है। संस्कृत में नीति सम्बन्धी प्रत्येक ग्रन्थ है जिसमें से प्रमुख ग्रन्थों के नाम इस प्रकार हैं (१) सुक्त-नीति, (२) बालक्य नीति (३) नीति शतक (४) लोकोक्ति मुक्तावली (५) उपदेश शतक (६) सूक्ति संग्रह (७) नीति मञ्जरी (८) नीतिवाक्यामृत (९) नीतिसार (१०) नीतिप्रकाश (११) नीति चम्प्रिका (१२) नीति पलाकर, (१३) इष्टान्त शतक (१४) नीति प्रदीप (१५) नीतिमाला (१६) नीति कमलाकर, (१७) नीतिप्रकाशिका (१८) नीति पलाकर (१९) नीति विशास (२) नीति विवेक धारि।

उपरोक्त ग्रन्थों में कुछ तो विद्युत् नीति के ग्रन्थ हैं और कुछ ग्रन्थ काव्यत्व से युक्त हैं। संस्कृत में विपुल परिमाण में श्रमोक्तियों की रचना भी हुई है जिसमें नीति और कविता का सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है। सोमनाथ बीरेन्द्रर विजयपालि बहुमूर्धन नीलकण्ठ जयन्ताच गणपति धारि कवियों ने अपने अपने शतकों में श्रमोक्तियों का संग्रह किया है। इनके अतिरिक्त संस्कृत में मुमापितों की रचना भी हुई है। "मुमापित पलाकर 'मुमापितावली' 'मुमापित कौस्तुभ' 'मुमापित निघण्टी 'कबीर मन्त्र समुच्चय' आदि ग्रन्थों में मुमापितों का संग्रह हुआ है।

यह ठीक है कि संस्कृत के समान हिन्दी में नीतिकाव्य-ग्रन्थों की रचना नहीं है फिर भी हिन्दी नीति काव्य परिमाण और गुण की दृष्टि से मध्यम नहीं है। चम्बरदासी जयनिक कबीर जायसी मूर, तुलसी केसर विहारी, भार्गव, प्रभाव पंत, मैथिलीशरण गुप्त धारि ऐसे अनेक कवि हुए हैं जिनके

काम्यों में नीतिकाम्य के सुन्दर उदाहरण स्वाम-स्वाम पर मिलते हैं। कुछ ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने नीति पर स्वतन्त्र रूप से भी लिखा है। हिन्दी नीतिकाम्य की कविताओं को चार कोटियों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) सतसई रूप में

(२) सतक रूप में

(३) नीति विषयक कविताओं के ग्रन्थ संग्रहों के रूप में और

(४) ग्रन्थ विषय से सम्बन्धित मुक्तकों के संग्रह में संग्रहीत नीति की कविताएँ।

१—सतसई रूप में—सतसई दो प्रकार की है एक प्रकार की वे सतसई हैं जिनमें नीति सम्बन्धी छन्दों को ही संग्रहीत किया गया है। इनमें से प्रमुख सतसईयों के नाम इस प्रकार हैं—

(१) रहीम सतसई, (२) तुलसी सतसई, (३) बृन्ध सतसई (४) बिरस नीति सतसई (५) सुविचार सतसई आदि।

दूसरे प्रकार में वे सतसईयाँ धारी हैं जिनमें ग्रन्थ विषय के छन्दों के साथ नीति के ग्रन्थ भी पर्याप्त मात्रा में संग्रहीत हैं। इस प्रकार की सतसईयों में कुछ प्रमुख नाम इस प्रकार हैं—

(१) बिहायि सतसई, (२) नविराज सतसई, (३) कृष्णपति सतसई, (४) रूपति सतसई (५) बन्धन सतसई, (६) राम सतसई, (७) विष्णु सतसई (८) हरिऔध सतसई (९) कस्तुर सतसई (१०) ब्रजसतसई (११) स्वदेश सतसई, (१२) बीर सतसई आदि।

२—सतक के रूप में—सतकों में भी नीति सम्बन्धी छन्दों का संग्रह किया गया है। कुछ प्रमुख सतकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) सज्जन गुण सतक (२) नृपनीति सतक, (३) उपदेश सतक (४) लोकोक्ति सतक, (५) समस्त नीति सतक, (६) दुखर सतक (७) नीति सतक (८) धर्मोक्ति सतक आदि।

३—नीति विषयक कविताओं के ग्रन्थ संग्रहों के रूप में—सतसई तथा सतक के परितरित कवियों ने अपनी नीति सम्बन्धी कविताओं को ग्रन्थ रूप में भी संग्रहीत किया है। इनमें से कुछ सतसईयों के नाम इस प्रकार हैं—

(१) प्रबोध बावनी (२) गसीहृत नामा (३) सील पचीसी (४) दान बावनी (५) विविधर कृत कुण्डलिनी (६) अम्योक्ति मञ्जूषा (७) शील मञ्जरी (८) नीति सप्रह. (९) नीति स्रष्टक (१०) नीति मुक्तावली (११) नीति मुखा मन्दाकिनी (१२) नीति मुक्तावली (१३) हित कृष्णावनदास कृत कुण्डलिनी (१४) अमर्य पञ्चीसिका (१५) सुनीति रत्नाकर (१६) उत्तम नीति चन्द्रिका (१७) सुनीति पद्म प्रकाश (१८) अम्योक्ति कम्पदुग्ध (१९) दीनवी कृत अम्योक्ति मञ्जूषा ( २० ) अम्योक्ति प्रकाश आदि ।

४—अन्य विद्वानों से सम्बन्धित मुक्तकों के सप्रह में संग्रहीत नीति की कविताएँ—कुछ ऐसे भी सप्रह हैं जिनमें अन्य विषय से सम्बन्धित छन्दों के साथ नीति सम्बन्धी अन्य भी संग्रहीत हैं। प्रायः प्रत्येक अष्ट कवि के कविता सप्रह में कुछ न कुछ नीति विषयक कविताएँ भी मिल जाती हैं। फिर भी कुछ मुक्त संग्रहों के नाम उल्लेखनीय हैं—(१) पाटन कृत 'ज्ञान सरोवर' (२) ब्यासाई रचित 'ब्यासोब' (३) रसमित्रि कृत 'रसन हुआर' (४) बनारसी शायर रचित 'ज्ञानबावनी' (५) पुनारेभास कृत 'पुनारे बोहावली' (६) हरि प्रोच कृत 'विष्य बोहावली', (७) मैथिलीशरण नुत 'भारतभारती' आदि ।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि हिन्दी का नीति काव्य परिमाण और भण्डार की दृष्टि से संस्कृत को छोड़कर किसी भी भाषा के नीतिकार्य से म्यून नहीं है ।

रहीम का नीतिकार्य—जैसे तो रहीम ने प्रेम सौन्दर्य नाविका भेद आदि पर शृङ्गारिक कविताओं की रचना भी म्यून की है लेकिन नीतिकार्य के प्रयत्न के रूप में उनका हिन्दी साहित्य में विशेष योग है । नीति काव्य कार के रूप में वे हिन्दी जनता में विशेष लोकप्रिय हैं । रहीम की 'सतसई' या बोहावली में उनके नीतिपरक बोद्धे सिद्धित और अतिशय लोगों की प्रकार के लोगों में कहावतों के रूप में प्रयुक्त होते हैं । उनकी इस लोकप्रियता का कारण है उनके नीतिकार्य का सरल सरस और प्रभावोत्पादक होना । यही रहीम के नीतिकार्य का विशेषण करना उपेक्षित होगा ।

यहसे बताया ही जा चुका है कि सफ़स नीतिकार्य में निम्न चार गुणों का होना आवश्यक है—

(१) नीतिकाम्य में किसी नीति या उपदेश का वर्तन होना चाहिये

(२) नीति या उपदेश के कथन में ऐसी विधिष्टता होनी चाहिये ता

प्रतिपाद्य नीति या उपदेश का मन पर प्रभाव पड़ सके

(३) भाषा सरल स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण होनी चाहिये तथा —

(४) कथन में स्पष्टता और प्रभावोत्पादकता लाने के लिये समुद

ह्यन्त का उदाहरणों का निबोधन होना चाहिये ।

रहीम के नीतिकाम्य में इन दुर्गुणों का उपावेश परमन्त सार्वक और सुम

(१) रहीम ने शीर्षबीबी होकर जीवन के बड़े-बड़े उतार-चढ़ावों में से देखा था । चार वर्ष की आयु में पिता के साथ अकबर के राज्य से निर्वासित हुए तथा अन्धश्रुति में ही पिता की मृत्यु का अन्वेषण कुछ सहन करना पड़ा था । अपनी प्रकृत प्रतिभा और योग्यता से अकबर के मन की जीता और कर्म समर्पण-मन पर अग्रसर होकर एक दिन अकबरी दरबार के नवरत्नों के एक हो गये । ये अकबरी राज्य के विनायक भी बनावे गये तथा कई नूर में विजय प्राप्त करने के उपलक्ष्य में अकबर में अनेक आवीरे उपहार स्वीकार की तथा कई प्राणों के सुबेहार भी बने । अकबर इनके पराक्रम प्रतिभा प्रशंसित होकर कई बार अवार बनराशि भी भेंट कर चुका था । बारिबागि हट्टि से भी ये बुखारम्मा में विशेष मुन्नी रहे । नाहबालू बीबी सुन्दर भी सुधीन पत्नी के साथ इनके ही पुत्र और दो पुत्रियाँ इनके पारिवारिक सुख और वैभव के प्रतीक थे । लेकिन इस सम्मान कुछ और वैभव के उत्कर्ष के साथ-साथ जीवन के अन्तिम दिनों में अपार विपत्तियों की भी उद्भूत कर पड़ा । बार बार पुत्रों की मृत्यु तथा दोनों पुत्रियों का अतपस ही विधवा काया पारिवारिक दुःख की चरम सीमा थी । राज्यशत्रु का मन्त्रीर धाये लगाकर अकबर के साथ के मातृक अहोरात्र के इनसे लड़ी आवीरे भीम भी कहने का उत्कर्ष यह है कि जीवन में बड़े-बड़े उतार चढ़ाव कुछ-कुछ रहीं थे देखे । अन्त-जीवन की वास्तविकता के समूह निर्यत का परिचय हो गया था । अन्तर्कार्य में उन्हें दूर-दूर प्रदेशों तक जाना पड़ता था । तथा दरबार में बने

वर्गों के व्यक्तियों से सम्पर्क होने के कारण उनके धनुमन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया था। यही कारण है कि वे अपने बोहों में जीवन को अधिक धिक् उन्नत बनाने के लिये सुन्दर नीति का प्रतिपादन करने में समर्थ हो सके। जीवन की गहरी समझना उनके पास थी और विद्याम धनुमन भी था अतः उनके नीति कथन लोगों पर अधिक प्रभाव डाल सके। और इसीलिए उनके बोहों में मानव-जीवन के विविध पलों का उद्घाटन हुआ है।

(२) कहियर रहीम के नीतिकाम्य की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि उनके नीति या उपदेश के कथन शुष्क नहीं हैं अपितु उनमें ऐसा वैशिष्ट्य है जो पढ़ने वाले और सुनने वाले पर बांछित प्रभाव डालता है। रहीम ने अपने जीवन के धनुमनों को ऐसे मार्मिक ढंग से बोहों में रखा है कि पाठक और श्रोता अभिभूत हो जाते हैं। प्रायः यह देखने में आता है कि जब मनुष्य विपत्ति में होता है तो उसके सम्बन्धी भी मुह खेर बैठे हैं और ऐसे बुरे दिनों में जिनको सहायता दी भी वे भी कष्ट देने वाले हो जाते हैं। रहीम ने जीवन के इसी सङ्कट समय को निम्न बोहों में कितने सुन्दर ढंग से कहा है—

जिहि प्रबल बीमक दुरखी हम्पों सो तप्यो बात ।

रहिमन असमय के परे मित्र नानु ह्य जात ॥

यन ही मनुष्य को मान देता है विपत्ति में उद्धारक होता है। यदि पास में नन नहीं है तो अपने भी कष्ट देने लगते हैं। रहीम ने नीति की इस बात को ऐसे ढङ्ग से कहा है कि उसमें एक विशेष वास्तव और मार्मिकता आ गई है—

जब सगि बिल न आधुने तब नगि मित्र न कोय ।

रहिमन अम्बुज अबु बिनु रवि माहिम हित होय ॥”

यन ही है बिना पीछे के कीन निरुका छाव देता है— कमल जब पानी में नृचक हो जाता है तो उसका हित-विमलक सूर्य भी उसे दग्ध करने लगता है। रहीम के प्रायः सभी बोहों कथन की इसी मार्मिकता और वैशिष्ट्य के



कारण बनता मैं मरगल लोकप्रिय धीर साहित्य की अनुपम लिपि बन  
उठे हूँ ।

(३) रहीम के दोहों की भाषा सर्वत्र सरस सुबोध और स्वाभाविक है ।  
उनके दोहों में बिहारी की भाँति शब्दों की खोज-भरोख और भाषा का कृत्रिम  
रूप देखने को नहीं मिलता । भाषा की सरसता और सादरी के कारण ही  
रहीम के दोहे निरक्षर मनुष्यों को बरान पर भी चढ़ गये । रहीम की लोक-  
प्रियता का एक बहुत बड़ा कारण उनकी भाषा का अक्रान्त और सरस होना  
भी है ।

(४) अपने दोहों में रहीम ने न केवल स्वानुभूति का विशद किया न  
केवल सरस व सारी भाषा को अपनाया अपितु सुन्दर व तार्किक दृष्टान्तों की  
आवोजना करके उन्हें विशेष प्रभावोत्पादक भी बना दिया है । उदाहरण  
‘सम्पन्न’ की भूमिका में डा० स्वामनुवरदास ने नीति-काम्य के लिये अनुठे  
दृष्टान्त का निमोजन होना आवश्यक माना है । कुछ दोहों को छोड़कर सर्वत्र  
रहीम ने ऐसे सुन्दर और सार्थक दृष्टान्तों और उपमाओं का विधान किया है  
कि देखते ही बनता है । दृष्टान्तों और उपमाओं के चुनाव में उनकी मौखिक  
सूक्ष्मता की बात ऐसी पड़ती है । मनुष्य की लोक संवत्सर की बात करनी  
चाहिये और व्यवहार करना चाहिये क्योंकि किसी कारणवश यदि बात निपट  
जाती है तो फिर उसका बगान सम्भव नहीं हो पाता । जैसे कि यदि एक  
बार दूध पट गया तो फिर साह कोचिस करने पर भी उसे बच कर मक्कन  
नहीं विक्रयता जा सकता । रहीम ने इस कथन की दृष्टि में तत्त्वतः बड़े ही  
सुन्दर और तार्किक दृष्टान्त की आवोजना की है—

‘बिहारी बात बने नहीं साज करी किम सोय ।

रहिमम फाटे दूध को मये न साजन होय ॥’

अनुठे दृष्टान्त प्रयोग के लिये भी कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

(१) रहिमम साज भली करो, अगुनो अगुन न जाय ।

राग सुनत पय पियतहीँ सौँव सहज धरि जाय ॥’

(२) ‘रहिमम आया प्रेम का मत तोड़ी लठकाय ।

टूटे से फिर ना भिसे दिसे गौठ पड़ आय ॥’

- (३) "रहिमम बेसि बड़े न को, सद्यु न बीजिये डारि ।  
जहाँ काम घामे सुई, कहा करे तरबारि ॥"
- (४) "रहिमन छोखे मरन सों बैर भसो न प्रीति ।  
काटे बाटे स्वान के बोक माँति बिपरीति ॥"
- (५) "यसि कुसंग चाहत कुसस, यह रहीम जिय सोस ।  
महिमा घटो समुद्र को राबख बसे परोस ॥"

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि रहीम के बोहे हिन्दी की प्रमुख निधि हैं । अपने विविष्ट युगों के कारण उनके बोहे हिन्दी नीतिकाम्य की प्रथम पुनर्देन माने जा सकते हैं । वही कारण है कि रहीम हिन्दी के नीति-कार कवियों में सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रसिद्ध हैं ।

## हिन्दी सतसई-परम्परा में रहीम का स्थान

सतसई का महत्त्व—भारतीय काव्य-शास्त्रियों ने रचना की दृष्टि से काव्य के दो प्रमुख भेद किये हैं— १—प्रबंध काव्य और २—मुक्तक काव्य । प्रबंध काव्य में किसी कथा का सम्बन्ध रूप से वर्णन होता है जबकि मुक्तक काव्य में किसी कथा का वर्णन नहीं होता । मुक्तक काव्य का प्रत्येक छन्द स्वतन्त्र होता है उसका सम्बन्ध अन्य छन्दों से नहीं होता । मुक्तक काव्य की रचना प्रबंध काव्य की अपेक्षा अधिक विपुल परिपाल में हुई है । और इसका कारण भी स्पष्ट है । मुक्तक काव्य के असीता और पाठक दोनों को सुविधा रहती है । कवि सरलता से बिना अधिक श्रम किये मुक्तक काव्य की रचना कर लेता है और पाठक भी बिना अधिक श्रम लपट किये मुक्तक काव्य का रसस्वादन कर लेता है । मुक्तक काव्य में एक छन्द दूसरे छन्द से सम्बन्ध नहीं होते—वाक्य छन्द वाच और विषय की दृष्टि से अन्य छन्दों से स्वतन्त्र होता है । इसीलिये कवि मुक्तक रूप में ऐसे इन छन्दों का सहज एक स्थान पर करते हैं । इन छन्दों को हज्जार, सात धी सी पचास पन्नीस आदि की संख्या में वर्गीकृत कर दिया जाता है । और इस प्रकार इन छंदों के नाम हज्जारा सतसई अठक पचास पन्नीसी आदि हो जाते हैं । इस प्रकार 'सत सई' नाम भी मुक्तक रूप से ऐसे पये छन्दों के संकलन के लिये प्रयोज होता

है। सतसईं संस्कृत शब्द 'सप्तशती' से बना है जिसका अर्थ है "साठ सौ" प्रत्यक्ष जिस काव्य में साठ सौ छन्दों का सम्मेलन हो उस सतसईं कहते हैं। 'सतसईं' में दो पंक्तियों वाले छन्दों—विशेषकर दोहों—का सम्मेलन रहता है। मुक्तक काव्य में सतसईयों की रचना विपुल परिमाण में हुई है और हिन्दी में तो कदाचित् सतसईयों के रूप में ही मुक्तकों का सबसे अधिक संग्रह किया गया है। 'सतसईं' के महत्त्व के सम्बन्ध में *Encyclopaedia of Britannica* में लिखा है—

"The Satsai is perhaps the most celebrated work of poetic art as distinguished from narrative and simpler styles. Each couplet is dependent and complete in itself and is a triumph of skill in comparison of language, felicity of description and rhetorical artifice."

अर्थात्—"विचरसात्मक तथा अल्प सरल पंक्तियों को छोड़कर काव्य में 'सतसईं' सम्भवतः सब श्रेष्ठ रचना है। इसका प्रत्येक दोहा स्वतन्त्र तथा स्वयं में पूर्ण होता है और भाषा संहति बर्तन-श्रीकृष्ण तथा चालकार आचार्य में अत्यन्त कीर्तन लभित होता है।"

हिन्दी-सतसईं परम्परा—भारतीय साहित्य में सर्वप्रथम सतसईं के रूप में रचना संस्कृत की 'सुगणसप्तशती' है। सुगणसप्तशती एक बार्मिक कृति है जो 'माकडेय्य पुराण' का एक भाग है। इसमें साठ सौ श्लोक हैं। चूंकि यह बार्मिक विषय की लेकर लिखी गई है अतः इसका प्रचार-प्रसार बार्मिक दृष्टि से ही हुआ—साहित्यिक दृष्टि से इसका महत्त्व विशेष नहीं रहा। साहित्यिक दृष्टि से सर्वप्रथम महत्त्व की सतसईं हाल कृत "भाषा सप्तशती" मानी जाती है। यह प्राकृत-भाषा के महाकवि हाम हाण रची गई है। संस्कृत के कवि बोधनभाषार्य ने इसी के अनुकरण पर 'सार्गसप्तशती' की रचना की। हिन्दी के सतसईं कारों पर इन दोनों सतसईयों का बड़ा प्रभाव पड़ा है। इन दोनों सतसईयों के प्रतिष्ठित हिन्दी के सतसईकारों पर जदुहरि के 'नीतिसतक',

“शृङ्गार चतक”, और “वीरचतक” यम कृक के “यम कृक चतक” विस्तृत कृत “और पञ्चाशिका” आदि काव्य कृतियों के भी वर्णित प्रमाण पर हैं। संस्कृत के इन मुख्य काव्यों के प्रतिपाद्य शृङ्गार तथा नीति—ये दो विषय ही प्रमुख रहे। हिन्दी की चतुस्र्यों के मुख्य विषय शृङ्गार और नीति ही रहे। हिन्दी की दोनों प्रारम्भिक चतुस्रें—“तुमसी चतुस्रें” और “रहीम चतुस्रें” नीतिविषयक ही हैं तथा इसके बाद “बिहारी चतुस्रें” का मुख्य विषय शृङ्गार है। यद्यपि उसमें कुछ सुन्दर नीतिविषयक कोई भी संघटीत है।

बिहारी चतुस्रें को असाधारण प्रतिष्ठि मिली और उसकी प्रतिष्ठि से जना विश होकर अनेक हिन्दी कवियों ने अपनी-अपनी चतुस्रियों की रचना कर डाली। जैसा कि बताया कि मुख्यतः इन चतुस्रियों के विषय शृङ्गार और नीति ही रहे। जैसे रहीम चतुस्रें और “तुमसी चतुस्रें” के परचात् की दूसरी चतुस्रें आदि नीति विषयक चतुस्रियों की कोटि में आती हैं और “बिहारी चतुस्रें” के परचात् की “मठिराम चतुस्रें” विष्णुचतुस्रें आदि शृङ्गार विषयक चतुस्रियों की कोटि में आती हैं। लेकिन आधुनिक काल में देश प्रेम, समाज सुधार आदि विविध विषयों पर भी चतुस्रियाँ मिलती हैं।

“बिहारी चतुस्रें” के परचात् निम्नी गई प्रमुख चतुस्रियों के नाम इस प्रकार हैं—(१) रसनिधि चतुस्रें, (२) मठिराम चतुस्रें (३) बृन्द चतुस्रें, (४) कुलपति चतुस्रें (५) भूपति चतुस्रें, (६) चन्दन चतुस्रें (७) इमराम चतुस्रें (८) राम चतुस्रें, (९) विष्णु चतुस्रें (१०) बुधन चतुस्रें, (११) हरिभीष चतुस्रें (१२) ब्रज चतुस्रें (१३) स्वदेव चतुस्रें, (१४) कण्ठ चतुस्रें (१५) वीर चतुस्रें आदि।

कुछ आलोचकों का यह कथन है कि विमोगी हरि की “वीरचतुस्रें” हिन्दी चतुस्रें-परम्परा की अन्तिम कड़ी है। इसके बाद चतुस्रें लिखने का काम टूट गया। यदि चतुस्रें निम्नी भी गई हैं तो एक ही हैं। कदाचित् चतुस्रें-परम्परा के एक भाग के अनेक कारण भी बिना बिये हैं। लेकिन प्रमुख आलोचकों का यह कथन यथार्थता का परिचायक है। चतुस्रें की परम्परा अभी नहीं है—अनवरत रूप से चल रही है। हाँ यह बात दूसरी है कि बिहारी के बाद

ऐतिहासिक में जिस लेखी से सतसहस्रों मिली गईं उसमें मंद वृत्ति प्रचुर पाई गई है। जैसे सतसहस्र की परम्परा पात्र तक जीवित है और प्रत्येक वर्ष एक-दो सतसहस्र का प्रकाशन होता रहता है। 'बीर सतसहस्र' के पश्चात् तो अनेक सतसहस्रों भव तक जप चुकी हैं जिनमें से कुछ मुख्य सतसहस्रों के नाम नीचे दिये जाते हैं—

(१) चरकसिंह निर्मल कृत "विशाल सतसहस्र" (२) रोहनसिंह की 'रोहन सतसहस्र' (३) "देवचन्द्र सतसहस्र" (४) शिवरत्न गुप्त 'शिवरत्न' कृत "शिवरत्न नीति सतसहस्र" (५) अम्बिकावत रचित "सुकेश सतसहस्र" (६) जमनासिंह सेनर की 'विशाल सतसहस्र' (७) रामनरूप मिश्र की 'सुविचार सतसहस्र' (८) राजेश कृत "राजेश सतसहस्र" आदि। इनके अतिरिक्त अभी एक-दो वर्ष पूर्व राजेश सभी द्वारा रचित 'ज्ञान सतसहस्र' तथा मदन कृत विमूर्ति सतसहस्र का प्रकाशन हो चुका है। तत्पश्चात् वालोचक डा० सुरेशचन्द्र गुप्त की "साधुनिक सतसहस्र" अभी प्रकाशित है। अब यह स्पष्ट है कि 'रहीम' और तुमसी से लेकर आज तक हिन्दी में सतसहस्र की परम्परा चलुम्ब रही है।

रहीम सतसहस्र का स्थान—हिन्दी की सतसहस्र परम्परा में सबसे अधिक सम्मान एवं यदि छोड़ा जाये तो निश्चित रूप से ये 'बिहारी सतसहस्र' के रूप में ही होना। 'बिहारी सतसहस्र' निश्चिन्त रूप से हिन्दी की सतसहस्रों में सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रेष्ठ है। 'बिहारी सतसहस्र' के बाद अवश्य ही कुछ सतसहस्रों का महत्त्व है। ऐसी सतसहस्रों में 'रहीम सतसहस्र' का स्थान प्रथम है। 'रहीम सतसहस्र' अभी अपूर्ण रूप में ही उपलब्ध हो चुकी है। लेकिन अपूर्ण रूप में तो वही इसका महत्त्व है—इसमें शन्देह नहीं। चूँकि यह 'बिहारी सतसहस्र' में पूर्ण की सतसहस्र है अब इस दृष्टि से इसका महत्त्व है ही। अन्य दृष्टियों से भी हिन्दी सतसहस्र-साहित्य में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। सतसहस्र परम्परा में 'रहीम सतसहस्र' का महत्त्व रचने वाले दिग्गज तत्त्व व्याप्त है—

(१) "रहीम सतसहस्र" को हिन्दी सतसहस्र-साहित्य की सर्वप्रथम कृति मानी जा सकती है। ऐसा मानने के कारण यह है कि 'रहीम सतसहस्र' से पूर्व अन्य किसी हिन्दी कवि की सतसहस्र उपलब्ध नहीं होती। उनके समकालीन

कवि तुलसीदास की 'तुमसी सतसई' काव्य प्राप्त होती है किन्तु उनके समय में यह निरक्षर पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि यह 'रहीम सतसई' से पूर्व ही रची है। 'तुमसी सतसई' के बारे में तो यह विचार भी प्रचलित है कि यह तुलसी द्वारा नहीं है। प. राघवदास ठिबरी तथा महामहोपाध्याय मुन्नाजी द्विवेदी के अनुसार तो 'तुमसी सतसई' बीत्यापी तुलसीदास रचित म होना मान्य है। माओपुर के किसी तुलसी काव्य की रचना है। कुछ विद्वान कहते हैं कि 'तुमसी सतसई' को तुलसीद्वारा न मानना ठीक नहीं है। कवि 'बोहावली' तुलसीद्वारा है तो 'सतसई' भी तुलसीद्वारा है क्योंकि 'सतसई' में 'बोहावली' मध्यम दो ही दोहे मिलते हैं। किन्तु केवल इतना कहने से ही सम्पूर्ण सतसई को तुलसीद्वारा मानने का जोर प्रमाण नहीं छूट जाता। इस सम्बन्ध में तुलसी साहित्य के मर्मज्ञ डा० माताप्रसाद मुखर्जी का कवन निवेदन रूप से इष्ट है— 'सतसई' का भी एक मुकुट 'बोहावली', में मिलता है। इस मंत्र के प्रामाण्य सिद्ध होने में संदेह नहीं है। 'सतसई' के उस मंत्र की सीरी तथा विचारों के सम्बन्ध में ही जो 'बोहावली' में नहीं मिलता यह बात कही जा सकती है कि उसका सम्बन्ध निश्चित रूप से तुलसीदास की रचना नहीं है।

उदाहरण के लिये डा० मुखर्जी ने 'सतसई' में उन चार दोहों को उद्धृत किया है जो 'बोहावली' में नहीं मिलते। उन दोहों के द्वारा मुखर्जी ने सिद्ध किया है कि वे कवि द्वारा नहीं हो सकते क्योंकि उनसे ऐसे चारों तरफों का प्रकीर्ण प्रचुरता के साथ हुआ है जो कवि की रचनाओं में प्राप्त नहीं मिलते।

फिर जिस दोहे में शब्द का रचना काव्य दिया हुआ है वह प्रमाण्य क्योंकि जिस प्रस्तावी पर धारणा करने पर कवि की धीरे-धीरे सिद्धि हुई उठती है, उस प्रस्तावी पर कवि दोहे में ही हुई सिद्धि ठीक नहीं उठती। इसीलिए 'सतसई' की प्रामाण्यता के सम्बन्ध में भी सन्देह किया जाता है वह मध्यम मंत्र ठीक नहीं है।

इसके साथ ही 'सतसई' की प्रामाण्यता के सम्बन्ध में डा० मुखर्जी का भी निष्कर्ष है— 'सतसई' की रचना 'बोहावली' के मूल में कवि के दोहों का एक ऐसा चरम संग्रह या जिसकी रचना के बाद धारणा मन्त्र हुआ

दिनांक इस प्रकार के दो एक दूसरे से क्वचित् भिन्न संज्ञाओं के रूप में व्यक्तित्व किया गया।

विवेक-निर्वाह तथा सीसी के आधार पर भी ऊपर विचार करते हुए चम्प के उक्त ग्रंथ की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में सन्देह प्रकट किया जा चुका है जो कि 'बोहावसी' में नहीं मिलता है। इसलिये यह प्रसम्भव नहीं है कि कवि के बोहावसान के अनन्तर किसी सत सर्ज के अनुकरण पर कवि के किसी अन्त में उसके कुछ दोहों के साथ साथ स्वरचित कुछ दोहे मिलाकर प्रस्तुत सत्रह तैयार कर दिया हो और उपर्युक्त विधि सम्बन्धी बोहा भी रचकर उसमें रच दिया हो।

— तुलसीदास

इस प्रकार यदि 'तुलसी सतसई' प्रामाणिक नहीं है तो 'रहीम सतसई' ही हिन्दी की प्रथम 'सतसई' ठहरती है। और यदि 'तुलसी सतसई' को तुलसीदास मान भी लें तो भी यह सिद्ध नहीं होता कि तुलसी ने उसे रहीम की सतसई से पहले ही रच लिया होगा। बहुत सम्भव है कि तुलसी ने जिस प्रकार रहीम द्वारा प्रामाणिक 'बरई' का प्रारम्भ पर मुख होकर "बरई रामायण की रचना कर वाली उसी प्रकार रहीम की सतसई से प्रामाणिक होकर अपनी सतसई का निर्माण भी कर लिया हो। सूर के गीतिकाव्य से प्रामाणिक होकर जो कवि "कृष्णबीवावली और "गीतावली" की रचना कर सकता हो उससे ऐसी प्रार्थना करना प्रसम्भव नहीं। तुलसी की वृत्ति प्रबन्ध काव्यों की रचना में अधिक रमती थी—'सतसई' को छोड़कर उनके प्रत्येक काव्य में प्रबन्ध के प्रति कवि के मोह को देखा जा सकता है। जबकि रहीम प्रारम्भ से ही मुख्य काव्य रचना की ओर प्रवृत्त थे। उनके प्रत्येक काव्य जीवन में मुख्य काव्य रचना की ही अधिक प्रवृत्ति थी। अतः यह बहुत सम्भव है कि प्रबन्ध काव्य के प्रेमी तुलसी ने रहीम की मुख्य काव्य रचना से प्रभावित होकर 'बोहावसी' की रचना कर ली हो और बाद में कुछ दोहे 'बोहावसी' और 'मानस' से लेकर और कुछ दोहे और रच कर 'सतसई' में संकलित कर दिये हों। यद्यपि तुलसी के किसी अन्त कवि में तुलसी के कुछ बाह्य को लेकर तथा स्वरचित दोहों को मिलाकर 'सतसई' के रूप में सत सी की संस्था पूरी कर दी हो। कुछ भी हो तब्य और अनुमान से यही निष्कर्ष निकलता है



कि रहीम की सतसई हिन्दी की पहली सतसई है और इस प्रकार के हिन्दी के प्रथम सतसईकार हैं।

(२) 'रहीम सतसई' के दोहों लोकप्रियता की दृष्टि से सबसे ऊँचा स्थान पाने के अधिकारी हैं। उनके दोहों सागर और निरंतर बनता में परवर्धित प्रचलित हैं। हिन्दी में अन्य किसी कवि के दोहों इतने लोकप्रिय नहीं हुए जितने रहीम के। यह ठीक है कि 'बिहारी सतसई' को सबसे अधिक प्रसिद्धि मिली किन्तु उसकी प्रसिद्धि और प्रचार साहित्यिक और विविध समुदाय व समाज वर्गों को इतने सुन्दर सरस और मार्मिक ढङ्ग से दोहों में रखा कि साधारण व्यक्ति सबसे प्रभावित हुआ। इसीलिये यदि 'बिहारी सतसई' साहित्यिक दृष्टि से सर्वाधिक प्रसिद्ध है तो 'रहीम सतसई' सामान्य जनता में सर्वाधिक लोकप्रिय है। सतसई के दोहों के कारण ही रहीम जन-जन की बाखी का द्वार बने हुए हैं। कबीर सूर तुलसी के समान ही रहीम हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय कवियों में हैं।

(३) 'रहीम सतसई' में जीवन के विविध और भीषण अनुभवों की गहरी समझना के प्रमाण मिलते हैं वे अन्य सतसईकारों में उस परिमाण उपलब्ध नहीं हैं। रहीम अन्य सतसईकारों की भाँति केवल कल्पना के संघ में विचरना करने वाले नहीं वे अपितु जीवन की सार्थकता से उनका प्रत्येक विकट का परिचय था। स्वानुभूति के इसी प्रकाशन के कारण उनके दोहों साधारण जनता के हृदय पर भी अपना पूर्ण प्रभाव डालने में सफल हुए हैं।

(४) रहीम की सतसई हिन्दी नीतिकाम्य की प्रथम श्रेष्ठ कृति कही जा सकती है। यद्यपि रहीम से पहले कबीर आदि संघ कवियों ने नीति से सम्बन्धित कविता कही है। किन्तु विषुय नीतिकाम्य की दृष्टियों में रहीम की सतसई ही प्रथम है क्योंकि कबीर की सभी साहित्य विषुय नीतिकाम्य से सम्बन्धित नहीं है। तुलसी आदि के काव्य में मध-मध नीति सम्बन्धी अन्ध मिल जाते हैं। बिहारी की सतसई यदि सुचारु विषयक सतसई में सबसे पहली और परवर्ती कवियों के प्रेरणास्रोत रही है तो रहीम की 'सतसई' भी

नीति विषयक कृतसङ्घों में सबसे पहली और परवर्ती कवियों की प्रेरक रही है। नीति विषयक 'बृम्ह सतसई' 'विरस नीति सतसई' आदि पर 'रहीम सतसई' का पर्याप्त प्रभाव लक्षित होता है। बिहारी भी 'रहीम की सतसई' से प्रभावित न रह सके। शुगर में पहरी धनिकि होने पर भी उन्होंने इसीनिमे नीति के बोहे भी लिखे हैं। उनके कुछ बोहों पर तो रहीम के बोहों की स्पष्ट छाया है।

(२) 'रहीम सतसई' भाषा की दृष्टि से भी अप्रतिम है। उसमें प्रपा का जैसा सीधा और सरल रूप मिलता है वैसे ही अन्य कृतसङ्घों में दुर्लभ है। बिहारी की सतसई में भी भाषा सुष्ठु अवश्य है लेकिन उसमें सरलता का अभाव मिलता है। उसमें सरलता के स्थान पर सजावट और ध्वनों की लोढ़ मरोड़ है। भाषा की इसी आकर्षक सुन्दरता सादगी और सरलता के कारण ही रहीम के बोहे जनता में इतने प्रचलित हो सके।

'बिहारी सतसई' भाषा में सुष्ठुता तो है किन्तु वह सरलता तथा सादगी नहीं जो 'रहीम सतसई' में है। भतिराम की सतसई में भाषा की सरलता भी है और सुष्ठुता भी लेकिन उनके बोहे जनता में इतने प्रचलित न हो सके। बृम्ह सतसई में भाषावत् सरलता और सुष्ठुता दोनों विद्यमान है और उसके बोहे जनता में लोकप्रिय भी हुए किन्तु उन बोहों में जीवन के उन विविध और दीर्घ अनुभवों का अभाव प्रायः है जो रहीम के बोहों की प्रमुख विशेषता है। इसीलिए पं० रामचन्द्र शुक्ल ने सत्य ही लिखा है—'रहीम के बोहे बृम्ह और विरसर के पदों के समान कोटी नीति के पक्ष नहीं हैं। उनमें भाविकता है उनके भीतर एक सच्चा हृदय आँक रहा है।'

इस प्रकार स्पष्ट ही कहा जा सकता है कि 'रहीम सतसई' का हिन्दी की सतसई-परम्परा में विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है और सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रबल सतसईकार होने के नाते रहीम हिन्दी साहित्य में मोरम चीम पर पर प्रतिष्ठित है।

## रहीम के दोहों में अनुभूति

काव्य के स्वल्प के सम्बन्ध में विद्वानों में विभिन्न मत प्रचलित हैं। लेकिन यह तो प्रायः सभी विद्वान् मानते हैं कि काव्य में कुछ ऐसा होना चाहिये जो मूल्य-जीवन को उच्च बनाने की प्रेरणा दे सके। साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं अपितु प्रदीप भी है। साहित्य के द्वारा समाज को मार्ग-दर्शन प्राप्त होता है। यद्यपि काव्य में समाज का माय-रूपन करने वाली नीति का बहुत महत्त्व है। लेकिन काव्य में शुष्क नीति का कबन उपा देने वाला भी हो सकता है। यद्यपि काव्य में नीति के कबन के लिये आवश्यक है कि वह नीति कवि के व्यक्तिगत अनुभव और संवेदना का परिणाम हो। पारम्परिक विद्वान् हब्सन ने काव्य के सम्बन्ध में लिखा है—“It is fundamentally an expression of life through the medium of language” यद्यपि काव्य मूलतः भाषा के माध्यम से जीवन की व्यञ्जना है। यद्यपि जिस कवि ने जीवन के उदार-बहाव बिठाने अधिक देखे होंगे तथा जीवन के विभिन्न पक्षों का चित्रण अधिक समुपम किया होगा वह उतना ही अधिक यथार्थ और खोले कवि होगा। जो कविता कवि की स्वाधुभूति के चित्रण अधिक निकट होगी वह उतनी ही अधिक पाठकों पर प्रभाव डालने में समर्थ होगी। रहीम की कविता इसलिये इसी अधिक लोकप्रिय एवं खोले समझी गई क्योंकि उसमें कवि के अनुभवों

की व्यापकता एवं गहराई अभिन्न होती है। रहीम को अपने जीवन में सब प्रकार की परिस्थितियों से झुझना पड़ा था यद्यपि उन्हें जीवन का विद्यालय एवं व्यापक अनुभव था। अपने जीवन में उन्होंने बीमार के स्वास्थान दिन रोज़ से तो विषम परिस्थितियों के कड़ से झूट भी पीने पड़े थे। बचपन से बार-बार बर्ष के ही से तो इनके पिता का बेहोश हो गया था यद्यपि छोटी सी प्रवस्था में ही निरुत्थ का बड़ा दुःख सहन करना पड़ा। इसके साथ ही उन्हें जीवन की कंटीली राहों में चलना पड़ा। इस प्रकार के जीवन के बीमार काल से ही समाज दुःख और निराशाओं से परिचित हो गये। लेकिन अपने अपार बुद्धि एवं पराक्रम और कौशल से सर्वांग सम्पत्ति और सम्मान अर्जित किया। जीवन काल में वे पारिवारिक दृष्टि से भी परम सुखी रहे क्योंकि माहबानु जैसी सुन्दर और सुधील पत्नी थीं पुत्र राज और दो पुत्रियों का पात्र निरन्तर ही पारिवारिक सुख की चरमसीमा थी। किन्तु जीवन के इस उत्कर्ष के साथ अपने इससे जीवन में ऐश्वर्य और सुख को भी इनसे दूर था। सुख और बीमार के राज्य के विचरण करने वाले रहीम को अपने जीवन की सम्पत्ति में अपमान दुःख और हासिय तथा बार-बार पुत्रों की सामान्यिक मृत्यु का अपार दुःख और दोनों ही पुत्रियों को असमय में ही प्राप्त बीमर्य जैसे असह्य दुःख को भी सहन करना पड़ा। जीवन के सुख-दुःख की इस घाँट मिथीनी ने उनके आसक्त कवि-हृदय को मणित कर दिया था यद्यपि यह मंत्रण से उत्पन्न अनुभूति ही शब्दों में साकार होकर कविता बन गई। हृदय की अनुभूति से उत्पन्न होने के कारण ही रहीम की कविता पाठकों के हृदय पर बाँधित प्रभाव डालने में सफल हुई है।

अन्तर का साम्राज्य बहुत विद्यालय था। उस विद्यालय का साम्राज्य के नगरालों में से रहीम भी एक थे। राज्य दरबार में रहने के कारण वे छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े व्यक्ति से मिलते थे तथा अनेक देशों में कुछ एवम् राज्य कार्य के सिने जाने से उनके अनुभव का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया था। यद्यपि उनकी कविता में जीवन के इस विद्यालय अनुभव की अभिव्यक्ति इतना सबसा स्वाभाविक था। पण्डित रामचन्द्र शुक्ल ने एक स्थान पर लिखा है—  
 "जीवन की सच्ची परिस्थितियों के सामिक रूप को ग्रहण करने की क्षमता

के समय तो मित्र भी सधु के समान व्यवहार करने लगते हैं ठीक उसी प्रकार जैसे कोई स्त्री अपने प्रांचल से मार्ग में बीपक की रखा करती जाती है लेकिन बीपक उसी को बता डामता है—

‘बिहि प्रांचल बीपक बुरयो हम्यो सो ताही गाछ’ ।  
रहिमम असमय के परे मित्र सधु छ जात ॥”

प्राम यह देखने में आता है कि अस्वस्थ मनुष्य भी बुझावध और म वालों से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं और बुझावध मनु इस हीन क्यों को करन में असमर्थ होने के कारण असफल रह जाते हैं—इ समय में वे अस्वस्थ सफल लोग बुझी व्यक्तिओं पर कलियाँ कसते हैं वाने मारते हैं ऊपरी सफलता का डिबोरा पीटते हैं घरे हर उपाय से उन्हें नीचा दिसाने का प्रयत्न करते हैं । ऐसे समय में बुझी और बुझिमान मनुष्य का मौन रह जाना ही बेमज्जर रहता है क्योंकि विरोध करने पर उसी की हानि सम्भव है । कबिबर रहीम को इस परिस्थिति का अपने जीवन में अनुभव कर चुके थे— इसीलिए वे इसे धर्मोत्ति पद्धति पर बड़े नासिक ढंग से रखने को असमर्थ हो सके हैं—

‘पावस बेसि रहीम मन कोइन सार्ध मौम ।  
अब बाबुर बक्ता मये हमको पूछे कौन ॥”

दिन यदि बुरे हैं तो चुप होकर बैठना ही बेमज्जर होता है किन्तु फिर भी रहीम एक प्राचावादी की भांति पुन अन्धे दिन घाने की कामना करते हैं—

‘रहिमम चुप है बेठिए, बेसि बिनन के फेर ।  
जब मौके दिन आइहें जगत न लागिहैं धेर ॥”

यबोकि विपत्ति जबिक समय तक नहीं रहती । जिस प्रकार अंधकार पूर्ण रात्रि की समाप्ति के बाद प्रभात का आगमन होता है उसी प्रकार दुःखों के बाद दुःख और उन्माद का आगमन होता है—

जिपति भए धन ना रहै रहै को साख कारोह ।

नम तारे जिवि जात हैं ज्यों रहोम मय मोर ॥

रहीम की कविता से सभी साधार और निम्नतर परिचित हैं जो उसका कारण यही है कि उन्होंने जीवन के धनुषों को सहज रूप में व्यक्त कर दिया है। इरीमिय तो आचार्य रामचन्द्र धुवन ने इनके सम्बन्ध में लिखा है—

संसार का इन्हें गहरा धनुषब या ऐसे धनुषब के मानिक पक्ष को ग्रहण करने की भावुकता इनसे ध्वितीय थी। अपने उधार और ऊँचे हृदय को संसार के वास्तविक व्यवहारों के बीच रखकर जो सम्बेदना इन्होंने प्राप्त की है उसी की व्यक्तता अपने दोहों में की है। तुलसी के बचनों के समान रहीम के बचन भी हिन्दी भाषी नृ माध में सबसाधारण के मुह पर रहते हैं इसका कारण है जीवन की सच्ची परिस्थितियों का धनुषब। यही कारण है उनके दोहे पढ़े लिखों में जितने प्रिय हैं उतने ही प्रिय जन साधारण में हैं और उनमें कहावतों के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। इनके गीतों के दोहों की तो ग्रामीण जन भी बाठ-बाठ में प्रयोग करते रहते हैं। रहीम की लोकप्रियता का यह स्वतन्त्र प्रमाण है। अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही व्यक्ति कार्य कर सकता है। छोटा व्यक्ति बड़े व्यक्तियों का कार्य कोषित करने पर भी नहीं कर सकता जैसे कि बूढ़े की जान से नयाड़े को नहीं मड़ा जा सकता—

“रहिमन छोटे नरम सों होस्त बड़ो महि काम ।

मड़ो बसामो न बने सो बूहे के जान ॥”

लेकिन छोटे बिस्कुल ही मइखहीम हों ऐसी बात भी नहीं है क्योंकि जहाँ एक छोटी वस्तु से कार्य सिद्ध होता है वहाँ बड़ी वस्तु भी कुछ नहीं कर सकती। जहाँ तुर्र की बकल है वहाँ बड़ी तलवार से भी कार्य सिद्ध नहीं हो सकता—

“रहिमन बेसि बड़ेन को लघु न खोजिए डारि ।

जहाँ काम पावे सुह कहा करे तरबारि ॥”

जीवन की पहरी से बहरी धनवृत्ति को रहीम ने इसी मानिकता और सरलता से रख दिया है कि अकित रह जाना पड़ता है। प्रब कर्मा जीवन का सबसे बड़ा सीधाय है। प्रेमीजन विरसे ही मिलते हैं और उनसे भी प्रेम

सम्बन्ध बनाये रखने में बहुत बिरसे ही लग्न हो पाते हैं। परन्तु यदि प्रेम सम्बन्ध किसी प्रकार टूट जाता है तो फिर प्रेम सम्बन्ध जोड़ने में पहली जैसी मजुरता नहीं आ पाती है जैसे कि जोरे के टूट जाने के बाद फिर जोड़ समाने से बाँट जय ही जाती है—रहीम ने इसी बात को बड़ी मामूली धीरे सुन्दरता से निम्न बोले में व्यक्त किया है—

‘रहीमन धागा प्रेम का मत तोड़ो छिटकाय।  
टूटे से फिर ना मिले मिले गाँठ पड़ जाय ॥’

इस प्रकार हम देखते हैं कि रहीम हमें अपनी जिन्दगी जीने की बड़ी है बड़ी सीख कविता के माध्यम से बड़ी कुशलता से दे रहे हैं। उनकी सीख जो कि उनके व्यापक अनुभवों की प्रतिफलन होती है परन्तु उनका प्रभाव सीधे धीरे धीरे निरिचल होता है। जैसा कि डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है—“जो साहित्य केवल कल्पना विभाव है जो समय काटने के लिये लिखा जाता है, वह बड़ी नीच नहीं है। बड़ी नीच वह है जो मनुष्य को बाह्य निद्रा आदि पशु सामान्य बराबर से ऊपर उठाता है। मनुष्य का शरीर दुर्लभ वस्तु है उसे पाला ही कम उप का पल नहीं है पर उसे महान् लक्ष्य की ओर उन्मुख करना भी अत्यन्त कार्य है। रहीम का काम हमें पशु सामान्य जीवन से ऊपर उठाने की प्रेरणा देता है—वह मान विभाव वा मनोरंजन का साधन नहीं बनता। वह हमें जीवन से ऊपर उठा कर किसी अतीन्द्रिय कल्पना लोक में भी नहीं उड़ाता अपितु वह तो हमें इसी जीवन के सहज सत्यों को हमारे घमस प्रस्तुत करता है ताकि हम अपने जीवन को अधिक सुखी अधिक सफल अधिक सुन्दर बना सकें। डॉ. रामकुमार वर्मा ने उनके सम्बन्ध में पूर्णतः सत्य ही लिखा है—“इनकी भाषा के पीछे जो भाव हैं वे एकाग्र सत्य होकर सजीव हैं जिससे मानव-जीवन का भट्ट सम्बन्ध है। धर्म की बात कहने में रहीम बड़े पटु हैं। उनकी रचना के पीछे एक ऐसा दृष्टि है जिसमें अनुभव धर्मदृष्टि और सरलता है। इसी कारण उनकी कविता लोकप्रिय और समर है। इनकी कविता इसकी अर्थ है कि इसमें कल्पना के बिना रहते हुए भी सरलता है और वह हमारे जीवन के निकट है।”

## रहीम पर पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव

रहीम ने संस्कृत धारणी फारसी तुर्की हिन्दी प्रादि भाषाओं के प्रसिद्ध ग्रन्थों का अध्ययन किया था फलतः वे प्रत्येक भाषाओं के साहित्य और शास्त्रों के बहुत और पंडित हो गये थे। राज्य दरबार में निरन्तर रहने के कारण वे प्रत्येक प्रकार के विद्वान और सामान्य जनों के सम्पर्क में भी प्राये वे फलस्वरूप वेद शास्त्रों के अतिरिक्त राजनीति और व्यवहारिक ज्ञान में भी निपुण हो गये थे। रहीम के इस गम्भीर अध्ययन की वृत्ति उनकी कविता में—विशेषकर बोहों में—बहुत बड़ी स्पष्टता के साथ में झलकती है। संस्कृत साहित्यशास्त्र के पंडित होने के कारण ही वे हिन्दी में रीति परम्परा का सीखलेख ना करते दिखाई पड़ते हैं। नायिका भेद का स्पष्ट वर्णन उन्होंने अपनी कविता में किया है। हिन्दी में यह नई चीज थी जिसका ऐतिहास में विशेष प्रचलन हुआ। उनका मूल धिस-वर्णन और विमलम्ब तथा सम्पूर्ण शृङ्गार का वर्णन भी प्राये प्राये वाली रीतिशासीन परिपाटी का पूर्वजान था। संस्कृत काव्यशास्त्र के अनुशीलन के कारण ही यह सम्भव हो सका। अपने पूर्ववर्ती साहित्य के व्यापक अध्ययन के कारण ही रहीम के काव्य में यद्यपि कुछ कवियों के भावों की स्पष्ट ज्ञाना दिखाई देती है। उनके बोहों में ही संस्कृत के पंचतन आणुस्य भीति धार्मिक, धर्मक प्रादि ग्रन्थों और कवियों के भाव की ज्ञाना स्पष्ट लक्षित होती



है। किन्तु इतना यह साक्ष्य क्यापि नहीं है कि खीम ने अपनी कविता दूसरों के भावों के आधार पर ही की है। वास्तव में बात यह है कि प्रत्येक साहित्यकार अपने पूर्ववर्ती साहित्यकारों से प्रभावित होता है। प्रत्येक अर्थ साहित्यकार का साहित्य न तो निराला भूतन प्रयोग होता है और न ही निराला परम्परा का पालन मात्र। संसार के बड़े-बड़े समर्थ कवियों ने अपने पूर्ववर्ती कवियों के भावों को निरस्तकोच अपनाया है। विरह प्रसिद्ध साहित्यकार कामिदास अवतरीवर और तुलसी का साहित्य भी अतप्रतिष्ठित मौलिक नहीं है—उन पर भी पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव है। संघर्ष के एक विद्वान् समालोचक ने शेक्सपीयर के कई नाटकों की पंक्तिनी चिन्तन कर यह सिद्ध किया है कि वे पूर्ववर्ती साहित्य के अनुकरण पर लिखी गई हैं। उनके अकेले 'हेनरी पष्ठ' नाटक की कुल १०४१ पंक्तियों में केवल १८६६ पंक्तियाँ ही मौलिक मिलीं। शेष पंक्तियों पर अन्य साहित्यकारों का प्रभाव है। परहाकि तुलसीदास कुछ दिवस प्रसिद्ध काव्य 'रामचरित मानस' पर वात्सीकि की 'रामायण' श्री मद्भामयत 'अभ्यारण रामायण' 'प्रथमरामय' 'हनुमन्नाटक' आदि अनेक ग्रन्थों का प्रभाव संक्षिप्त होता है। ब्रह्म रामर' पर तो 'भावयत् का इतना प्रभाव है कि कुछ लोग उसे भावयत् का अनुकरण मात्र कह बैठे हैं।

किन्तु वही कि बताया जा चुका है अतप्रतिष्ठित मौलिक साहित्य की रचना निराला मुश्किल है इसीलिए एक आलोचक ने लिखा है—'अपने से पूर्व होने वाले कवियों के भाव अवलम्ब का यदि विचार किया जाय तो हिन्दी का कोई भी कवि इस बोध से चकूता न कूटेगा। कविता धामराय के पूर्व और चन्द्रना की भी ब्रह्म लव पावेगा। तारे भी निम्नज हो लघीय की भाँति त्रियाटिमाले देव पड़ेगे।' पूर्व कवियों के भाव से सामान्यित होना बोध नहीं है—अपितु मात्र दूसरों के भावों पर अपना कविता-महल सजा करना बोध है। श्री प्रतिभासाली कवि होता है वह नव-नव अन्य कवियों से प्रभावित होता हुआ भी अपनी मौलिकता को कायम रखता है। अन्य कवि के भाव को वह रत्न की भाँति छोले पर इस तरह चढ़ देता है कि उसकी धारा कई मुनी बड़

जाती है। संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ध्वन्यालोक' में इस सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है—

‘अथपि तत्रापि रम्यं तत्र लोकात्सु किञ्चित् ।

स्फुरितमिवमितीत्यं बुद्धिं रम्पुञ्जिवाते ॥

अनुगतमपि पूर्वम्भाषया वस्तुतादृक् ।

सुकवि कल्पनिबन्धनम् निम्नतानोपयाति ॥”

अर्थात्—“बिना कविता में सङ्ख्येय आधुनिक को यह प्रतीत हो कि इसमें कुछ मनीषीय चमत्कार है फिर चाहे उसमें पूरा कवियों की छाया ही क्यों न दिखालाई पड़े—यान् धपनाने में कोई हानि नहीं है—उस कविता का घृष्टा सुकवि अपनी बंध छाया से पुराने माय को नवीन रूप देने के कारण, निरनीय नहीं समझा जा सकता ।

जो कवि बहुत और बहुभूत होना उसके काव्य में तो उसके प्रत्ययन की छाया दिखाई पड़ेगी ही । तुमसी ऐसे ही बहुत विद्वान् से घट उनके काव्य में प्रत्येक प्रयोग और कवियों का प्रभाव लक्षित होता है और अपने ‘मानस’ के प्रारम्भ में तो उन्होंने माना पुराण निगम आदि के आधार पर प्रत्येक रचना की बात को स्वीकृति भी प्रदान की है । यही भी बहुधापाविद्ध और अनेक साक्ष्यों के पण्डित से घटएव उनके काव्य में पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव लक्षित हो तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है । अंग्रेजी के प्रसिद्ध साहित्यकार इमर्सन का इस सम्बन्ध में कथन विस्मृत अधिष्ठ ही है—“साहित्य में वह एक नियम तो हो गया है कि यदि एक कवि यह दिखाना सके कि उसमें मौलिक रचना करने की प्रतिभा है तो उसे अधिकार है कि वह औरों की रचनाओं को इच्छानुसार अपने व्यवहार में लावे । विचार उसी की सम्पत्ति है जो उसका आधार-स्तम्भ कर सके—सही ढंग से उसकी स्थापना कर सके ।

वहाँ हमने यही के कठिपद दोहों को लेकर यह दिखाने की चेष्टा की है कि वह पर अपने पूर्ववर्ती साहित्य का प्रभाव किसना और केंसा पड़ा है । निरन्तर ही यही अपने पूर्ववर्ती कवियों के आधारी है किन्तु उनके

परवर्ती कवि भी रहीम के कम घामारी नहीं है क्योंकि ये एक परवर्ती कवियों में उनके भावों को निस्संकोच व्यक्त करता है। रहीम के सम्बन्ध में यह बात तो सत्य ही है कि उन्होंने पूर्ववर्ती कवियों के भाव का प्रभाव ही बहुत किया है—उसका उसो का लोकोपकारण भाव नहीं किया है। यही कारण है कि रहीम के दोहों पर इनके व्यपनेपन की छाया है और इसीलिये वे दोहे हिन्दी में सर्वाधिक लोकप्रिय हो सके। यह हम जगह-जगह वहीर कुछ ऐसे संस्कृत और हिन्दी के श्लोकों को जैसे जिनकी छाया रहीम के दोहों में लक्षित होती है। टीका करते समय भी यह प्रबल किया गया है जहाँ अन्य कवियों से भाव सादृश्य लक्षित हो—उसका उल्लेख कर दिया जाये।

“चितिका बीपिता पर्य फटा भग्ना मयेकम् ।  
मिस्रिलिष्टा तु वा प्रीतिर सा स्नेहेन वर्जते ॥”

—पंचतन्त्र

रहीमन पाया प्रेम का मत तोड़ो छिटिकाय ।  
टूटे से फिर भा मिले मिले गाँठ पड़ जाय ॥’

× × × —रहीम  
‘आपत्काले तु सम्प्राप्ते ममिर्षं निजमेव तत् ।  
दुर्द्धि काले तु सम्प्राप्ते दुर्जनोऽपि सुदृढ मयेत् ॥”

—पंचतन्त्र

“कहि रहीम सम्पति समे बनत बहुत बहु रीत ।  
बिपति कसीटी के करते, सो ही सचि मीत ॥”

× × × —रहीम  
“यत् न बन्धु व्याघ्रमकारिसेवते जनिमहीन बहुकटकानुरागम् ।  
सुरागि अग्रा परिधान बल्कलं, न बन्धु मध्य घनहीन बीबितम् ॥”

—पंचतन्त्र

“अह रहीम कानन मलो, बास करिय फल मोय ।  
बन्धु मध्य बनहीन हूँ, बसिबो उचित न होय ॥”

—रहीम

× × ×

“उदये सविता रक्तो रक्तश्यास्तमयेतथा ।  
सम्पत्सौ च विपत्सौ च महतामेककृपता ॥”

—पंचतन्त्र

“जगत बाही किरन सों प्रचलत ताही कांति ।  
त्यो रहीम सुख दुख सब बड़त एक ही भांति ॥”

—रहीम

×

×

×

“वाता सधुरपि सेव्यो भवति न कृपस्यो महानपि समृद्ध्या ।  
कृपोऽन्तः स्वाहुक्तः प्रीत्यै लोकस्य न समुद्रः ॥”

—पंचतन्त्र

“जनि रहीम जल पक को, लघु जिय पियत प्रदाय ।  
उदधि बड़ाई कौन है जगत पिघासो जाय ॥”

×

×

×

—रहीम

‘विबन्ति नद्य स्वयमेव नाम्न  
स्वयं न स्वावन्ति फलानि वृक्षा-  
‘पयोमुवाप्सः’ बभविबन्ति पात्यं  
परोपकारस्य सतां विमूतयः ।

—देवेस्वर

“तस्वर फल महि सात हूँ सरवर पियहि न पान ।  
कहि रहीम परकाज हित संपति सँजहि सुखान ॥”

×

×

×

—रहीम

‘येषां न विद्या तपो न धर्मः ।  
ज्ञान न धीर्मान गुणो न धर्मः ।  
ते मर्त्यलोके भुवि मारुताः ।  
मनुष्यकपेण मृगाश्चरन्ति ॥”

—वाणस्प नीति

“रहिमन विद्या बुधि नहीं नहीं धरम जस जान ।  
भू पर जनम वृथा धरे, पसु बिनु पुख विद्यान ॥”

—रहीम

×

×

×

“याचनाहि पुरुषस्य महत्त्वं नास्मयत्यनिसमेव तथाहि ।  
सद्य एव भगवानपि विष्णुवर्णिनो भवति पाञ्चितुमिच्छन् ॥

—बारी

“रहिमन याचना गहे बड़े छोटे हू जात ।  
नारायण हू को भयो बाबन रंगुर मात ॥”

—छोम

× × ×  
“विहृति मेव मच्छति सङ्गबोपेण साधव ।  
प्रावेष्टितं महासर्पैश्चम्बलं न विधायते ॥”

ओ रहीम छलम प्रकृति का करि सकत कुसंग ।  
बन्दन बिय व्यापत नहीं निपटे रहत जुगग ॥”

—छोम

× × ×  
सम्पुष्टमिच्छे वासो न कर्तव्य कदाचन ।  
घटी पिबति पानीयं तावन्मोक्षस्तरी यथा ॥”

—शङ्कर

रहिमन नीच प्रसंग से नित प्रति लाभ बिकार ।  
नीर घुरावे सम्पुटी भाव सहत धरियार ॥

—छोम

× × ×  
“यद्वदन्ति अपमेत्यपबाधं नय कूपलमिदं कमसाया ।  
कूपलं जलनिर्धेहि भवेत्तद्वत्पुत्राण्युक्त्याय वदीताम् ॥”

—धर्मरुद्र

“कमला बिर न रहीम कहि यह जानत सब कोय ।  
पुत्रय पुत्रात्म की बधू, क्यों न रचबसा होय ॥”

—छोम

× × ×  
“तुर्बलम समं सत्यं प्रोति चापि न कारयेत् ।  
पञ्चो बहति चाङ्गारः शीतं कृष्णायते करम् ॥”

“मोछे की सतसंग रहि मन तजहु अंगार क्यों ।  
तस्तो बार अथ सोरो ये कारो मये ॥”

+ + + —रहीम

जबन जबन बहु अंतरा जबन जबन बहु बाल ।  
ये तीनों बहुत मये, जोता जोर कमान ॥”

उवा—

—कबीर

“नबनि मोछ के प्रति कुलदायी ।  
निमि अकुस वसु उरग बिसाई ॥”

—गुलसी

“यह रहीम भाने नहीं बिस सेमबा न होय ।  
जोता जोर कमान के मए से अलगुन होय ॥”

—रहीम

+ + +  
“मोत काटि जल बोइये, साये अधिक पिपास ।  
हुससी मोत सराहिये मृए मोत की भास ॥”

—गुलसी

“जाल परे जल जल बहि, तबि मोतन को मोह ।  
रहिमन मझमो मोर को तरु न दाइत छोह ॥”

—रहीम

× + +  
“कुसमय मोत काको कबन ।  
अपार मिरगा जाल बेध्या कोटि कानन धवन ।  
अंग छोड़ित भयो बेरी, जोस बीमो तबन ॥”

—मूर

“रहिमन अतमय के परे हित अनहित हूँ जाय ।  
बधिक अये मृए जाल सों बधिर बेत बताय ॥”



रहीम सतसई की टीका



महादेव बन हो जाता है। कवि ने अपनी 'बतलाई' के प्रारम्भ में ऐसा स्तुति परक यह बोझा मनसावरल स्वरूप रखा है।

(१)

निहि रहीम मन घायनो, कीम्हो पाव बकोर।

निसि वासर लाग्यो रहे, हुण्डु बग्न की ओर ॥

अर्थ—बिह प्रकार बकोर इकटक बग्नमा को देखा करता है उसी प्रकार रहीम कहते हैं कि मेरा मन कभी बकोर भी बीकृष्ण कभी बग्नमा को तथा ठार देखाता रहता है।

नितेव—कवि की हुण्डु विषयक अति भावना का यह बोझ नुमर वरि बाधक है।

(२)

रहिमम कोऊ का कर, ज्वारी, ओर सवार।

जो पस रासनहार हैं, मासन-सासन हार ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि बुघाधि ओर धीर जर्फमा उसका कुछ भी नहीं दियाइ सकडे जिसकी लाल रखने वाले वासन की बचने वाले भयबाग्न बीकृष्ण स्वर्ण है।

नितेव—इस बोझ में भी कवि को भयबाग्न बीकृष्ण के अति घास्वा का परिचय मिलता है। भयबाग्न बीकृष्ण ने बुघाधि अकुनि ने पाप्मनों की रक्षा की भी कहा है अब ग्वाल-बाग्न की पापों को घुहावा या तो ग्वाल-बाग्न की रक्षा कहा है की भी धीर जर्फने बुघासन से डीपरी की रक्षा की भी। कवि का हिन्दुओं का पीरास्थिक लाल भी बहुत व्यापक है।

(४)

रहिमम मसी है साँकरी हुजो म उहराहि।

घापु ग्रहे ती हरि महीं, हरि तो घापुम नाहि ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि मन की बली लेकरी होती है इसमें दो चीजें एक बाध नहीं सवा सकती। यदि इसमें यहकार है तो भयबाग्न नहीं या सकटे धीर भयबाग्न के धाने पर यहकार को स्वाग नहीं मिल सकता।

सी भाव साम्य पर कहा है—

गरि नहीं धन हरि है मैं नाहि ।  
किरी, ता मैं हो न समझि ॥

ही भाव है—

धरि होय ।

उ छावो ताहे क्यों भावे कोय ॥”

(३)

नहीं, भई पूजा मैं हामि ।

नि हैं, नाम के छिहर कालि ॥

रहीम सतनं—

तही रहा कलत पूजा यही नहि नहीं हो  
जसा यमदूत कैते प्रतिष्ठा रख सकते हैं ।

(६)

अन्वय—

हरि न कलामो माग

तु आन्यो सदा उपाधि ।

नो जमम गैवापो बाधि ॥

अन्व—

मैं ही धीर धर्म की बरबाद में बिना समा  
हीम कहते हैं—हे बंधु ! तुम्हारे धर्मों में धर्म ही अपना जीवन बर्बाद  
धीर महारथ का फल प्राप्त कर लेते हैं ।

क्योंकि विद्युत् रूप बलान्तर पर पुनः पुनः ही रहीम की वात्सा का चोटक है ।

धीर को छिन्न नहीं है कलामो दूर दूर साम्य पर लिखा है—

तुम्हें धार के साथ कलामो पर नाग । आन्यो विषय सदा ॥

विशेष—(१) बंधा के प्रति प्रति ३५ जमम गैवापो बाधि ॥

अति भाव प्रकट किया है अपने ३५

मय होता है । मुसलमान होते हुए भी ३५ श्रुत विषय सपटाय ।

में एक बहादुर है । र गुलियाएँ साथ ॥

(२) पुराणों में यह लिखित है कि ३५ तम मन में नहीं रहा धीर विषयों  
धीर महारथ की लड़ाई में रही है । ३५ ही तो जाना पर्वत करते हैं  
सम्बन्ध में ही लिखा ३५ गते हैं ।



## रहीम सतसई—मूल व टीका

(१)

अध्युत चरण तरंगिनी, क्षिप्र सिर-मासति-मास ।  
हरि न बनायो सुरसरो, कीर्ति इन्द्रब भास ॥

अर्थ—यंवा की स्तुति से अपनी 'सतसई' का प्रारम्भ करते हुए कविवर रहीम कहते हैं—हे नर्म ! तुम्हारी महिमा से अछबन धरने के बाद बिष्णु भी महादेव का पद प्राप्त कर सके हैं । लेकिन तुम मुझे बिष्णु रूप न बनाना क्योंकि बिष्णु रूप बनाने पर तुम चरणों से निकलने वाली नदी कलमाघोषी और भी उचित नहीं है अतएव तुम मुझे महादेव रूप ही बनाना ताकि मैं तुम्हें धार के साथ समस्त पर बारछ कर सकूँ ।

विवेच—(१) यंवा के प्रति कवि ने जिस लग्नमत्ता और श्रद्धा से अपना भक्ति भाव प्रकट किया है उससे कवि का हिन्दू धर्म की धोर रुझान दृष्टि गल होता है । मुसलमान होते हुए भी उनकी यह धार्मिक उदात्ता अपने धाम में एक उदाहरण है ।

(२) पुराणों में यह प्रसिद्ध है कि यंवा बिष्णु के चरणों से निकली है और महादेवजी की अटाघों में रही हैं । पुराणों में इसके स्नात की महिमा के सम्बन्ध में भी लिखा है कि इसके स्नात के बाद मनुष्य बिष्णु रूप और

महादेव बप हो जाता है । कवि ने अपनी 'सतसई' के प्रारम्भ में यथा स्तुति परक यह बोझा संयत्नाचरण स्वस्थ रखा है ।

(१)

मिहि रहीम मन आपमो, कीन्हो साथ चकोर ।

मिसि वासर लाग्यो रहे कुम्हल चम्न की ओर ॥

धर्म—जिस प्रकार चकोर इकट्ठक चम्नमा को देखा करता है उसी प्रकार रहीम कहते हैं कि मेरा मन कभी चकोर भी कीहुण्ड कभी चम्नमा को सदा तार देलता रहता है ।

विराज—कवि की कुम्हल विषयक जलित भावना का यह बोझ सुन्दर परिचायक है ।

(२)

रहिमन कोऊ का कर, क्यारे, खोर, सवार ।

जो पत राजनहार हैं माखन-वाखन हार ॥

धर्म—रहीम कहते हैं कि कुपारी और धीर लक्ष्मी उसका कुछ भी नहीं बियाड़ सकते जिसकी साथ रखने वाले माखन को खजने वाले मनबाद कीहुण्ड स्वयं है ।

विशेष—इस बोझ में भी कवि को मनबाद कीहुण्ड के प्रति आस्था का परिचय मिलता है । मनबाद कीहुण्ड ने कुपारी शकुनि से पाण्डवों की रक्षा की थी ब्रह्मा ने जब म्दान-बालों की गर्धों को छुड़ाया था तो म्दान-बालों की रक्षा ब्रह्मा से की थी और लक्ष्मी बुद्धावन से हीपरी की रक्षा की थी । कवि का हिन्दुधर्म का पौराणिक ज्ञान भी बहुत व्यापक है ।

(३)

रहिमन गली है साँकरी बूजो त ठहराहि ।

आपु अहै तो हरि नहीं, हरि तो आपुन नाहि ॥

धर्म—रहीम कहते हैं कि मन की बली सकरी होती है इसमें दो चीजें एक साथ नहीं समा सकती । यदि इसमें यहकार है तो मनबाद नहीं या तबले और मनबाद के धाने पर यहकार को स्थान नहीं मिल सकता ।

विशेष—कबीर ने भी इसी भाव साम्य पर कहा है—

“जब मैं जा तो हरि नहीं जब हरि है मैं नाहि ।  
प्रेम गही अति लीकरी ता मैं हो न समारि ॥”

भारतेन्दु का भी तबतब गही भाव है—

“दे क्यों एक भ्यान अति बोय ।  
बिज नेवल में हरि रस काबो लाहे क्यों माये कोय ॥”

(३)

राम-नाम जाग्यो नहीं, मई पूजा में हानि ।  
कहि रहीम क्यों मानि हैं, जम के किकर कामि ॥

अर्थ—राम-नाम के परिचय नहीं रहा कलत पूजा भली नीति नहीं हो  
पाई, रहीम कबि कहते हैं कि किर भला यमदूत कैसे प्रतिष्ठा रख सकते हैं ।

(४)

राम-नाम जाग्यो नहीं जाग्यो सदा उपाधि ।  
कहि रहीम तिहि आपुनो जलम गेवायो बाधि ॥

अर्थ—राम के नाम को जाना नहीं और व्यर्थ की बरबाद में बिना जपा  
रहा रहीम कबि कहते हैं कि ऐसे मनुष्यों ने व्यर्थ ही अपना जीवन बर्बाद  
किया ।

विशेष—यह बोझ राम-नाम के प्रति रहीम की आस्था का छोटक है ।  
महाकवि तुलसीदास ने भी इसी भाव के साम्य पर लिखा है—

राम-नाम जाग्यो नहीं जाग्यो विषय सबाद ।  
तुलसी नरवपु पाइ कै जनम गैबाओ बाद ॥

(५)

रहिमन राम म उर बरे रहत विषय सपटाय ।  
पसु सर आत सबाब सों गुर गुसियाए जाय ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि राम का ध्यान मन में नहीं रखा और विषयों  
में लिपटना पसंद किया जैसे कि पसु कभी कभी तो खाना पसंद करते हैं  
लेकिन मोठा गुड़ अवरण वसे में खाने पर ही खाते हैं ।

(८)

समय बसा कुल बैसि क, सोय करत सम्मान ।

रहिमन बीम अनाथ को, तुम बिन को जगवान ॥

अर्थ—सोय व्यक्ति का समय बसा घोर कुल देखकर सम्मान करते लेकिन राष्ट्रीय कवि कहते हैं मदीय घोर अनाथ व्यक्ति का तो एकमात्र । जन्म बीमयवान् ही होते हैं ।

(९)

अमर बैसि बिनु मूस की प्रतिपासत है ताहि ।

रहिमन ऐसे प्रभू तबि सोजत फिरिए ताहि ॥

अर्थ—जिना जड़ की अमरवेल की पोषित करने वाले प्रभू को तब वृ किछके आशय की सोज करछा है अर्थात् ऐसे व्यक्तिवान् प्रभू को सोज कीन ऐसा है जो उनकी बराबरी कर सके ।

(१०)

गहि सरमागति राम की सबसागर की नाव ।

रहिमन जगत उबार कर सोर म कछु उपाय ॥

अर्थ—राम की उरछ ने सब-सागर से ठीकी नाव पार हो जानेकी—बयव से पार होने का नही उपाय है ।

(११)

मुम मारी पायाम ही कपि पक्षु मुहु मस्तंग ।

तीनों तारे राम कू तीनों मेरे अंग ॥

अर्थ—चोथम मुमि की तभी नाचर की अम्बर रसु के घोर विपाद बाध बा—लेकिन इन तीनों को ही आपने तार (उबार कर) दिया । मुझ में इन तीनों के अक्षय्य मोक्ष हैं अर्थात् मेरा हृदय आपाणवत् कठोर है पशु के समान मेरी पुंवा में प्रवृत्ति है तथा मेरे आचरण आशान के समान है अतः जैसे आपने इन तीनों का उबार किया है तो मेरा भी उबार कीजिए क्योंकि मेरे में भी इन तीनों के अक्षय्य विधान हैं ।

( १२ )

भजों तो काको मैं भजों तमों तो काको धाम ।

भजन तजम ते विसग है तेहि रहीम तू जान ॥

अर्थ—मैं किसको नबू और किस का त्याग करू जो प्राप्तित तथा विरहित से पुनः है रहीम कवि कहते हैं कि ये ही उत्तम हैं ।

( १३ )

भाबी काहू न बही भावी हू भगवान् ।

भाबी ऐसी प्रबल है कहि रहीम यह जान ॥

अर्थ—होनहार ने किसे प्रभावित नहीं किया ? होनहार से तो भीमवान् स्वयं प्रभावित हुए थे । अतः रहीम कवि कहते हैं कि होनहार (भाबी) से प्रबल कुछ नहीं है ।

( १४ )

विपति भय दन ना रहे रहे जो लाज करोर ।

मम तारे छिपि जात है क्यों रहीम मय भोर ॥

अर्थ—विपति के कारण अधिक श्रम तक नहीं रह पाते जो लाज धीर करोड़ की सख्या में जाये रहते थे । जैसे आकाश में तारे दिन के उदय होने से छिप जाते हैं वैसे ही दुःख के कारण भी छुट जाते हैं ।

( १५ )

रहिमन आगा प्रेम का मत तोड़ी छिटकाय ।

टूटे से फिर ना मिले मिले तो गाँठ पड़ जाय ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि प्रेम का आगा नाशुक होता है इसे भटका देकर छोड़ना उचित नहीं होता क्योंकि यह आगा एकबार टूट जाने के पश्चात् फिर मिल नहीं सकता और यदि मिलाया भी जाये तो टूटे हुए आगों के बीच में गाँठ पड़ जाती है ।

( १६ )

रहिमन प्रीति सराहिये मिले होत रंग बून ।

क्यों जरबी हरबी तब तब सफेबी बून ॥



अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि जूने धीर हस्ती के से भेल बाते प्रेम की सराहना करनी चाहिए क्योंकि हस्ती धीर जूना बोनीं ही मिसकर अपना पीला धीर सफेद रंग छोड़ कर भाल रंग के हो जाते हैं । ऐसे ही प्रेम में वो प्रेमी हृदय अपना अस्थिर भूल कर एकाकार हो जाते हैं वास्तव में ऐसा ही प्रेम सराहनीय है ।

( १७ ) ✓

जाल परे जस जस रहि, तनि मीनन को मोह ।

रहिमन मछरी मीर को ठऊ न छाड़त छोह ॥

अर्थ—मछली के जाल में खँस जाने से वो जल मछली का मोह छोड़कर जाल में से बह जाता है लेकिन मछली जल का प्रेम फिर भी नहीं छोड़ती धीर जल के बिछोह में ठकप-ठकप कर अपनी जान दे देती है ।

भाव शाय—

(१) मीन काट जस जोहये जाये अधिक पिबास ।

जुलसी प्रीत सराहिये मुये मीत की प्रास ॥

—जुलसी

(२) प्रेमी प्रीति न छाड़ही होत न मनते हीन ।

मरे परेहु उबर में ज्यों जल बाह्य मीन ॥

—बुम्ब

( १८ )

यदि रहीम गति मीन को, जस बिसुरत जिय जाय ।

बिजस कज तनि जमस बसि कहीं मीर को भाय ॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि मछली की वखा बन्ध है जो अपने प्रिय जल से बिसुरते ही अपनी जान दे देती है लेकिन जमर की बचि सराहनीय नहीं है जो अपने प्रिय कमल को छोड़ कर अन्य स्थान पर जमा जाता है ।

( १९ )

मयत मयत भाखन रहै बही मही बिलगाय ।

रहिमन सोई मीत है मीर परे ठहराय ॥

अर्थ—मक्ते-मक्ते मक्खन तो बह जाता है धीर बही से मद्धम घनन हो

जाता है, रहीम कवि कहते हैं कि नहीं मित्र है जो निपटि के समय भी साथ देता है ।

(२०)

रहिमन पड़ा प्रेम को निपट सिमसिसी गल ।

बिछमत पाँव पिपीसि को सोग सबावत बेस त

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि प्रेम का मार्ग एकदम क्लेशना है जिस पर बीटी तक के पाँव क्लेश खाते हैं और खोय उस पर रील आव कर चलत है अर्थात् प्रेम के मार्ग पर चलना अत्यन्त दुष्कर है ।

(२१)

कहा करो वैकुण्ठ से कल्पवृक्ष की छाँह ।

रहिमन डाक सुहावनो को गस पोतम बाँह ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि यदि प्रिय अपने समीप न हो तो स्वर्ग प्राप्त करके तथा कल्पवृक्ष की छाया में बैठ कर क्या करेगा और यदि वने में प्रिय हम की बाँह पड़ी हो तो डाक का वृक्ष भी सुहावना लगेगा ।

(२२)

अलहि मिलाय रहीम ज्यो, कियो धाय सम बीर ।

अ गवहि धायुहि धाय स्यों सकल साथ को नीर ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जिस प्रकार वृक्ष में जल के मिसाने पर जल जल को अपने ही समान बना लेता है उसी प्रकार धाय पर चढ़ाए जाने पर मित्रता के कारण जल धाय की साथी तपन को स्वयं अङ्गीकार कर लेता है और धाय के रूप में उड़ जाता है ।

(२३)

अहाँ गाँठ तहँ रस महीं यह रहीम जग खोय ।

मड़ए तर की गाँठ में गाँठ गाँठ रस होय ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि सघारवानता है कि जहाँ गाँठ (जम्मे धादि की गाँठ, मनोमार्मिग्य) होती है वहाँ रस नहीं रहता परन्तु बिबाह मण्डप के

नीचे धर-बधू को परस्पर बाँधने वाली नाँव के तो सब-सब में रस भरा होता है ।

( १४ )

बिहि रहीम तन मन सियों दियो हिए बिब मोल ।  
सासो बुझ सुख कहन की रही बात सब कोल ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जिस प्रिय ने मेरा धीरे धीरे मन सब कुछ से लिया है और जिसने मेरे हृदय में अपना निवास स्थान बना लिया है उस प्रिय से सब कुछ धीरे बुझ कहने की कौन सी बात खेब रहती है । वह तो सब मुझसे एकाकार हो गया है ।

( १५ )

कै सुसगे ते बुझ गए बुझ हैं सुसगे माहि ।  
रहिमन वाहै प्रेम के, बुझि बुझि कै सुसगाहि ॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि लफ्फी पारि को वस्तु भी सुनयती है वह सुनय कर बुझ जाती है और जब सुनय कर बुझ जाती है तो पुनः नहीं सुनयती । परन्तु प्रेम में जो मोम बरब होते हैं वह बुझ-बुझ कर भी सुनयते रहते हैं यहाँ प्रेम की शक्ति खदेब बनती रहती है ।

( १६ )

ओ रहीम तन हाथ है मनसा कहीं किन जाहि ।  
जस में ओ छाया परे, काया भीजति माहि ॥

अर्थ—रहीम कवि धीरे की महत्ता प्रतिपादित करते हुए तथा मन को भीरा बताते हुए कहते हैं कि यदि धीरे पास है तो कोई चिन्ता नहीं है मन तो कहीं भी जा सकता है उसे कि यदि जस में धीरे की छाया पड़े हुए भी धीरे उस जस से भीरता नहीं है ।

( १७ )

ओ रहीम मन हाथ है तो तन कहीं किन जाहि ।  
जस में ओ छाया परे, काया भीजति माहि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि यदि मन अपने वध में हो तो धीरे कहीं भी

बला नाम कोई शस्त्र नहीं पड़ता । जैसे यदि शरीर बल में नहीं है और शरीर की छाया बल में पड़ती है तो भी शरीर उससे भीगता नहीं ।

(२८)

टूटे सुखम मनाइए, जो टूटे सो बार ।

रहिमम फिरि फिरि पोइए, टूटे भुक्त्यहार ॥

अर्थ—यदि अपना प्रिय सो बार भी कंठे तो उस कंठे हुए प्रिय को मनाना चाहिए । क्योंकि यदि मोतियों का हार टूट जाय तो मोतियों को बार बार बाने में पिरो लेना चाहिए ।

(२९)

पसरि पत्र रूपहि पितरहि सकृद्वि बेत ससि सीत ।

कहु रहीम कुल कमल के को बरी को मीत ॥

प्रसंग—बल कमल का पिता है और सूर्य कमल को खिलाता है पर बल बल को सोच लेता है । दूसरी ओर बख्शमा के लिए तो हितकारी है पर कमल को सकृद्विष कर देता है । अतः रहीम भी कहते हैं—

अर्थ—बल सूर्य उचित होता है तो कमल अपनी पंखुड़ियाँ फैला कर अपने पिता बल का खिला लेता है और उसकी रक्षा करता है । जब बख्शमा निकलता है तो कमल अपनी पंखुड़ियों को समेट लेता है और बख्शमा की सीतलता बल तक जाने देता है । इस प्रकार सूर्य कमल का मित्र और बल का शत्रु है जब कि बख्शमा कमल का शत्रु और बल का मित्र है पर कमल और बल के प्रेम के कारण वह नहीं सात होता कि सूर्य और बख्शमा में से कौन कमल के कुल का शत्रु है और कौन मित्र है ।

(३०)

यह न रहीम सराभिये बेन सेन की प्रीति ।

प्राप्त बाची राखिये हार होय के जीत ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि केवल सेन सेन से सम्बन्ध रखने वाले प्रेम की प्रशंसा न कीजिए । प्रेम में तो प्राणों को भी बर्बाद पर लया देना चाहिए फिर चाहे जीत हो या हार, चाहे सफलता मिले या असफलता ।

( ३१ )

रहिमन एक दिन मे रहे बीच म सोहत हार ।

वामु को ऐसी यह गई सोचन पड़े पहार ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि एक समय का जब प्रेमी और प्रिय का हृदय मिलाते समय बीच में हार भी नहीं मुहाता था । पर जब हुआ ऐसी बरब गई कि प्रेमी और प्रिय के बीच पहाड़ों की धूपी या पई है । अब दोनों विमुक्त होकर दो स्वामीयों पर गये हुए हैं ।

( ३२ )

रहिमन तीर की चोट से चोट परे अवि जाय ।

मन वाम को चोट से चोट परे मरि जाय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब मनुष्य पर बाण के प्रहार का घावात होता है तो वह चिन्तित करने से बच भी जाता है पर तेज कमी वालों के प्रहार की चोट से मनुष्य व्याहत होकर जबर नहीं सटता मर ही जाता है । अतः साधारण बाणों से मयन-बाण की चोट अधिक कठोर होती है ।

( ३३ )

रहिमन मर्तिहि सयाय के बेखि सेह किन कोय ।

मर को बस करिबो कहा मारायन बस होय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि कुछ भी काम करना मनुष्य के हाथ में नहीं है बल्कि भगवान के हाथ में है । यदि विश्वास न हो और चाहो तो किसी से मग बना कर देख लो ।

( ३४ )

रहिमन मारण प्रेम को मस्त मति हीन मझाय ।

जो बिगिह तो फिर कई मर्हि भरमै को पाय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बुद्धिहीन लोगों को प्रेम के मार्ग से दूर नहीं रखना चाहिए । यदि प्रेम के मार्ग से एक बार विचलित हो गए तो फिर उत्तार में कोई ठिकाना नहीं रहता ।

( ३१ )

रहिमन मैं नुरंग यदि बसिबो पावक माहि ।

प्रेम पेश ऐसा कठिन सब कोउ निवहत नाहि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं प्रेम के मार्ग का निर्वाह प्रत्येक व्यक्ति नहीं कर सकता । प्रेम माने पर चलना ऐसा कठिन है जैसे मोम के मोड़े पर बढ़ कर घाव पर चलना ।

( ३६ )

रहिमन सो न कछु यमैं आसों लागें नैन ।

सहि के सोच बैसाहियो ययो हाम को चैन ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जिससे प्रेम हो जाता है वह फिर और किसी वस्तु पर ध्यान नहीं देता । सब कुछ सहन करके वह बिन्ता मोल ले लेता है और साथ-साथ उसके हाव से निकल जाता है । उसे फिर प्रेम हो जाने पर फिर चैन नहीं मिलता केवल बिन्ता ही रहती है । जिस प्रकार कोई वस्तु मोल लेने के लिए कोई प्रिय वस्तु देनी होती है उसी प्रकार बिन्ता को मोल लेने के लिए अपने हाव में घाए हुए चैन को देना पड़ता है ।

( ३७ )

रोस बिगाड़े राज कू मोस बिगाड़े मास ।

सैन सनै सरदार की, जुगस बिधाड़े बाल ॥

अर्थ—श्राव्योसन या हुस्नद राज्य को बिगाड़ देता है जमींदार सम्पत्ति को हुस्नयाम करके समाप्त कर देता है और जुगलजोर छूटी सम्पत्ति जुगलिया कर के भीरे भीरे सरदार की आत्म (रीति) को ही बिगाड़ देता है ।

( ३८ )

बहै प्रीति नाहि रीति यह नहीं पाछिसो हेत ।

घटत घटत रहिमन घरी, क्यों कर सीन्हे रेत ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जिस प्रकार हाथ में लिया हुआ रेत भीरे भीरे धन धन कर गिर जाता है उसी प्रकार प्रेम भीरे भीरे बट जाय यह प्रेम की रीति नहीं है और न पछन किया हुआ प्रेम ही भीरे भीरे बटता है ।

( ५९ )

(३९)

विरहोक्त-धन तम भयो, प्रवधि प्राप्त उद्योत ।

क्यों रहीम भावों निता अमकिलात उद्योत ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जिस प्रकार भावों की रात में जुझु अमक जाता है उसी प्रकार विरह कपी यने धन्यकार में प्रवधि की प्राप्ति कपी उकाध अमक जाता है ।

(४०)

रहि रहीम जग मारियो, नैन-बान की छोट ।

भगत भगत कोऊ कधि गये चरम कमल की छोट ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि सम्पूर्ण संसार कपी के नैन कपी बाखों की छोट से भर गया केवल कुछ भगवान के भक्त ही बच सकें जिन्होंने भगवान के चरण कपी कमलों की छोट से ली थी ।

(४१)

कहु रहीम केतिक रही केतिक गई बिहाय ।

माया ममता मोह परि अत जैसे पड़िताय ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं बताओ तो तुम्हारा फितना बीजन रहा है और फितना समाप्त हो गया है । माया और ममता के मोह में पड़ कर ईश्वर का ध्यान न करने पर बीज अन्त में पड़ता हुआ इस संसार से जाता जाता है ।

(४२)

चरण छुए मस्तक छुए तैहु न छोड़िनि पान ।

हिमो सुबत प्रभु छोड़ि बै कहु रहीम का जानि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जिस व्यक्ति के चरण छुए जाते हैं (जिसे की चरण में जाता जाता है) प्रवधा भी मस्तक पर हाथ रख देता है (किसी को आश्रय देता है) वह व्यक्ति भी फिर हाथ नहीं छोड़ता जब हृदय से प्रभु को बाह करी पर प्रभु तुम्हारा स्थान करवें वह भीसे संभव है ।

(४३)

बिजकूट में रमि रहे रहिमन प्रवध नरेश ।

आ पर बिपदा पड़ति है सो आनति यह बेश ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि प्रपञ्च के राजा (राम) जिनमूट में निवास कर रहे हैं। जिस व्यक्ति पर विपत्ति पड़ती है वही चरण मेने के लिए उस स्थान पर जाता है।

विशेष—कहा जाता है रहीम जब स्वयं निर्बल हो गए और याचक की सहायता नहीं कर सके तो उन्होंने याचक को यह सोझा लिख कर रीबा नरेश के पास भेजा। रीबा-नरेश ने उस याचक को एक लाख रुपया दे दिया।

(४४)

ओ रहीम करिबौ हुतौ बस को इहँ हवास।

तौ काहे फर पर बर्यो गोवर्धन गोपास ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि हे कृष्ण ! यदि आपको बस को त्याग कर उसकी ऐसी ही व्यवस्था करनी भी तो इन्द्र से इन्द्र की रक्षा करने के लिए हाथ पर गोवर्धन पर्वत को क्यों चारण किया था ?

(४५)

ओ रहीम होतौ कहँ प्रभु गति अपने हाथ।

तौ कौयों केहि भामतो आप बड़ाई साव ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि यदि प्रभु की इच्छा मनस्य के प्रधीन होती तो अपने बड़प्पन के बर्ष में कोई मनुष्य किसी दूसरे को कोई महत्व ही नहीं देता।

(४६)

ज्यो नाथत कठपुतरी करम नचावत पात।

अपने हाथ रहीम ज्यो नहीं आपुने हाथ ॥

अर्थ—जिस प्रकार कठपुतली नचाने वाला कठपुतली को नचाता है वही प्रकार कम (प्रारब्ध) मनुष्य के शरीर को नचाता है। प्रतीत तो ऐसा होता है कि सब काम हमारे ही हाथों से हो रहे हैं पर वस्तुतः अपने हाथ में (काम में) कुछ भी नहीं है।

(४७)

तन रहीम है कर्म बस मन राजो ओहि धोर।

जब में उसटी नाच ज्यों, जँबत गुन के ओर ॥



अर्थ—विषय प्रकार जस में बहती हैं। तब को बहान की निपटीत रक्षा में मेवाने के लिए कुछ (रस्सी) के धोर से लीजा जाता है उसी प्रकार बचपि शरीर तो कर्म के बध में होता है पर मन का ईश्वर की ओर लवाए रखना चाहिए। विषय प्रकार तब बहान की ओर बहती है उसी प्रकार शरीर भी कर्म के बध में होकर संसार की ओर प्रवृत्त होता है पर विषय प्रकार तब को बहान के निपटीत में जाने के लिए रस्सी से लीजते हैं उसी प्रकार मनुष्य को भी अपने मन को कुछ के सहारे ईश्वर की ओर समुत्त रखना चाहिए।

(४८)

विषय बीनता के रसहि, का जाने का धंधु ।

मसी विचारी बीनता बीन बंधु से बंधु त

अर्थ—यह जन्मा संसार निर्बन्धता के प्रतीकिक स्वर को क्या समझ सकता है ? वह बेचारी बीनता (निर्बन्धता) ही मसी जिसके बीनबन्धु भगवान् जैसे बन्धु (भाई) हैं। विपत्ति पड़ने पर ही मनुष्य ईश्वर को याद करता है और तब ईश्वर उसकी रक्षा करता है।

(४९)

कुस मर सुनि हांसी करै बरत रहीम ग बीर ।

कही सुनै सुनि सुनि करै, ऐसे के रघुबीर ॥

अर्थ—सोग रहीम के कुस को मुम कर उपहास करते हैं पर रहीम को लौं नही डेंबता। केवल भगवान राम ही ऐसे हैं जो विपत्ति कहे जाने पर उसे सुनते हैं और सुनकर सहायता करते हैं।

(५०)

प्रीतम छवि नननि बसी, पर छवि कहा समाय ।

अरी सराय रहीम ससि पधिक आय फिर आय ॥

अर्थ—रहीम की कहते हैं कि प्रियतम कृष्ण की मोहिनी वृत्ति मेरों में बसी हुई है जब जहाँ भग्य किसी वेषता यात्रि की छवि जैसे धा सकती है। प्रिय की छवि से परिपूर्ण नैव बरी हैं सराय के समान है। यदि भग्य किसी की छवि रात्रि के समान जाती है तो स्वर्ब ही गीट जाती है। यहाँ जहाँ रहने को स्थान मिल ही नहीं पाता।

(३१)

मार भौंकि लै मार में, रहिमन उतरे पार ।

प बूढ़े मंझपार में; जिनके सिर पर मार ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जो संसार के मार को त्याग देते हैं वे इस संसार के पार उतर जाते हैं, पर जिनके सिर पर संसार का मार लदा हुआ है वे बीच में ही डूब जाते हैं ।

(३२)

मणि धुकरिन को गयो केहि न त्यागियो साथ ।

सांगत आगे सुख सह्यो ते रहीम रसुनाय ॥

अर्थ—ऐसा कौन सा मनुष्य है जो माँगे जाने पर अपनी बात से न नट गया हो ? किस व्यक्ति ने मणि जाने पर साथ नहीं छोड़ दिया ? अब हम अपने साथियों से माँगना आरम्भ कर देते हैं तो वे हमारा साथ छोड़ देते हैं । किन्तु अबबान राम के माँवने के पूर्व ही सुख मिल जाता है । (यैसे जमीषण को माँवने से पूर्व ही राम ने सख्त का राज्य दे दिया था )

भावतत्प्राप्त—मुलना कीजिए—

‘तव प्रसादस्य पुरस्तु कल्पद ।’

(३३)

रहिमन तुम हम सौ करी, करी-करी जो तीर ।

बाढ़े दिन के भीत हो बाढ़े दिन रघुबीर ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार विपत्ति के दिनों में हाथियों ने अपने नवरत्न को छोड़ दिया था उसी प्रकार आपने भी विपत्ति में मेरा साथ छोड़ दिया । आप भी अच्छे दिनों के ही मित्र हैं ।

(३४)

रहिमन घोखे भाब से भुलसे निकसे राम ।

पावत पुरम परम गति, कामादिक को घाम ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जो मनुष्य काम चाँहि सब पापों का धर है उसके मुख से यदि बोखे से भी राम का नाम निकल जाय तो वह पूर्ण परम गति को पा लेता है ।

(३५)

सदा नगारा कुच का, याचत आठों आम ।

रहिमस या अंग आइकै, को करि रत्ता मुकाम ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि आठों आम (रात-दिन) इस संसार से चलने का नगाड़ा बजता रहता है, हर समय मृत्यु की सम्भावना बनी रहती है। इस संसार में आकर कौन सा प्राणी स्थायी रूप से रह सका है? सभी को मृत्यु घाने पर मर्ही से परलोक को प्रस्थान कर देना पड़ता है।

(३६)

सौदा करी सो करि चसो, रहिमन पाही घाट ।

फिर सौदा पैहो नहीं, कूरि जान है जाट ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यह संसार एक बाजार के समान है। यहाँ इसी जगम में जो कुछ सौदा करना हो कर सो, पुष्प आदि अर्जित करना हो अर्जित करो। वहाँ से जाने के पश्चात् फिर क्या विषय का व्यवहार नहीं मिलेगा क्योंकि मृत्यु के पश्चात् जिस मार्ग पर चलता होवा वह मार्ग बहुत लम्बा है।

(३७)

सतत सपति जानि के सय को सब कछु बैठ ।

हीन बन्धु जिन बोन की, को रहीम सुधि सेत ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि हीन बन्धु समर्थान के अतिरिक्त अन्य कौन बरीबों का ध्यान रख सकता है? यों इस संसार में जब भीम उन सब को ही सब कुछ देते हैं जिनके पास सम्पत्ति है। जब भोग समस्त सेत हैं कि समस्त व्यक्ति के पास तो स्थायी सम्पत्ति है तब उसी सम्पत्तिवासी व्यक्ति को वे भोग सब कुछ दे देते हैं निर्बन्धों को कोई कुछ नहीं देता।

(३८)

हरि रहीम ऐसी करी ज्यों कमान सर पुर ।

जोखि आपनी ओर को, बारि दियो पुनि दूर ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार बन्धु पर बढ़ाए हुए हाथ को

पहले अपनी धीर भीचते हैं धीर फिर छोड़ कर बहुत दूर तक देते हैं  
वही प्रकार है मयबन् ! आपने मुझको पहले जब तो कृपा करके अपनी ओर  
भीषा पर पुनः आने से दूर कर दिया ।

निदेश—‘सक्तमाधु’ के अनुसार भीमाप जी के मन्दिर में प्रवेश करते में  
रुकावट होने पूर्व पर रहीम न यह सोझ भिन्ना था ।

( २८ )

रहिमन कीम्हीं प्रीति साहज को भाव माहीं ।

जिनके अमर्षित भीत हमें गरीबन को गम ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि मैंने प्रभु से प्रेम किया पर प्रभु को वह  
अच्छ नहीं लगा । ठीक भी है । मैं तो गरीब हूँ धीर प्रभु के अमर्षित मित्र हूँ ।  
धीर जिनके अमर्षित मित्र हैं वह हम गरीबों की ओर क्यों ध्यान देगा ।

( ६० )

बिम्बु भी सिन्धु समान को अचरम कासों कहैं ॥

हेरम हार, हिरान, रहिमन अपुने आपते ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बुद्ध भी समुद्र के समान होतो है यह आश्चर्य  
हीन किस्से बड़े । देखने वाला अपने आपको देख कर ही आश्चर्य में पड़  
जाता है । भाव यह है कि आत्मा जी परमात्मा के समान ही है धीर ईश्वर  
को खोजने वाला उसको अपने आप में ही पाकर आश्चर्य में पड़ जाता है ।

( ६ )

एन जन व्याधि विपत्ति में रहिमन भरे न रोय ।

जो रक्षक बननी बठर, सो हरि गये कि मोय ।

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि दुःख में (हार जाने पर) जन में रोग में धीर  
आपत्ति में बहुत रोना नहीं चाहिए क्योंकि जो ईश्वर माता के धर्म में स्थित  
बिम्बु की रक्षा करता है वह क्या सो गया है ? वह अवश्य ही रक्षा करेगा ।

( ६२ )

जो धर हो में भुसि रहे, कवसी सुपत मुडील ।

तो रहीम तिनते मले पय के अपस करील ॥

अर्थ—जो धर में ही सुख पछे जाने धीर मुडील केने के दुःख बुझकर रहे

तो उससे पहले तो रास्ते के बिना पत नाले करीब ही है ।

(६३)

जो पुरुषारथ ले कहूँ, संपत्ति मिसल रहीम ।

पेट लागि बैराट घर, तपल रसोई भीम ॥

अर्थ—केवल पुरुषार्थ (उद्योग) मात्र करने ही सम्पत्ति प्राप्त नहीं होती—  
यदि पुरुषार्थ से ही सम्पत्ति मिल जाती तो महापुरुषार्थी भीम केवल अपना पेट  
करने के लिये बैराट के घर जागा बनाने वाला रसोइया न बनता ।

विवेच—दुर्योधन ने पाण्डवों को ११ वर्ष का वनवास दिया था तथा  
उसको अंतिम एक वर्ष का अज्ञातवास भी दिया था । अज्ञातवास के लिये ही  
पाण्डव पुत्र भीम बैराट के घर रसोइया बन कर रहे थे तथा युधिष्ठिर बाह्यर  
बने थे अर्जुन नृत्यकार मकुल व्यासा और सहदेव सईस बन थे ।

(६४)

जो सरजाह जसी सदा सोई तौ ठहरस्य ।

जो जल समरी पार तें सो रहीम बहि जाय ॥

अर्थ—जो मर्यादा सर्वत्र रही है वहीं तक जाना ठीक रहता है । पानी यदि  
किनारे को पार करता है तो बह जाता है ।

(६५)

रहिमल कठिन चित्तान तें, चित्त को चित धेत ।

चित्त बहुति निर्बीज को, चित्ता बीज समेत ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि चित्त से भी अधिक चित्ता कठिन होती है  
क्योंकि चित्त तो मृतक को जगाती है लेकिन चित्ता जीते भी जगाती है ।

(६६)

जो बड़ेम को सधु कहें नहि रहीम धटि जाहि ।

निरधर मुरलीधर कहें कछु बुझ मानत नाहि ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि बड़े को छोटा कहने से बड़े का बदृष्ण नहीं  
बढ़ता क्योंकि निरधर को मुरलीधर कहने से उनको महिमा में कमी नहीं होती ।

(६७)

जो रहीम करिबो हुतो ब्रह्म को इहै हवाल ।

तो काहे कर पर धरयो गोबचन मोपास ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि यदि भगवाद् श्रीकृष्ण को ब्रह्म की यही रक्षा करनी थी ब्रह्म वासियों को छोड़कर उन्हें कुछ देना या तो फिर क्यों मोक्षार्जन पर्यंत अंकुसी पर बाधण करके उनकी रक्षा की थी ।

(६८)

अंजन दियो तो किरकिरी सुरमा दियो न जाय ।

जिन भाँजिन सो हरितलख्यो रहिमन बसि-बसि जाय । ॥

अर्थ—जिन भाँजों से भगवाद् का पुष्प वर्धन किया है और जिनमें उनका वास है उन भाँजों में काबल नहीं लगाया जा सकता क्योंकि वे फिर किरकिरी हो जायेंगी । उनमें सुरमा भी नहीं लगाया जा सकता क्योंकि सलाई समने का मय रहता है । ऐसी भाँजों पर रहीम कवि बलिहारी होते हैं ।

(६९)

अंतर बाब सगी रहै, बुँदा न प्रगट सोय ।

कं प्रिय जानि आपनो ब्रह्म सिर बीती होय ॥

अर्थ—हृदय के भीतर भगवान के प्रति प्रेम की अग्नि प्रज्वलित रहती है लेकिन यह अग्नि ऐसी विविध है कि इसका बूझा बाहर नहीं दिखाई पड़ता । इस अग्नि का अनुभव तो वह मन ही कर पता है जिसके सिर पर यह बीच रही है ।

(७०)

मोछो काम बड़े करें तो न-बड़ाई होय ।

ज्यो रहोम हनुमंत को, मिरघर कहे न कोय ॥

अर्थ—यदि सौट व्यक्ति बड़ा काम करते हैं तो उनको बड़ाई नहीं मिलती वैसे हनुमान के पहाड़ उठा कर जे जाने पर भी उन्हें मिरघर की परकी से कोई विभूषित नहीं करता ।

विसेव—इसी आशय का बोधा नं० भी देखें ।

(७१)

उन्हें सार्थ सय सय सब सार्थ सब काय ।

रहिमन भूसहि सींचियो फूसहि फसहि अघाय ॥

शब्द—एक को ही साबने से सब कार्य बिछ हो जाते हैं और सब को साबने से कोई कार्य सिद्ध नहीं होता । रहीम कवि कहते हैं कि वह को ही सींचने से सारा वृक्ष फूलने पलने लगता है उसी प्रकार भस्म व्यक्ति को सब में करने से सारी कार्य सिद्धिवाँ हो जाती है ।

(७२)

अमृत ऐसे बचन में रहिमन रिस को गँस ।

जैसे भिसिरिहु में मिसी मिरस बाँस की कँस ॥

शब्द—अमृत जैसे मीठे बचनों में यदि मन की यत्नितता छिपी रहती है तो रहीम कहते हैं कि वह ऐसी ही माकूम पड़ती है जैसे मीठी मिर्ची में बैरस बाँस की कँस ।

(७३)

घरज गरज मार्ने नहीं रहिमन ए जन धारि ।

रिनिया राजा मंगला काम धातुरि भारि ॥

शब्द—रहीम कवि कहते हैं कि ज्वार देने वाला राजा पिछाटी और कामातुर स्त्री—ये चार व्यक्ति मान मनीषन को भी नहीं मानते और अपना अभिर्भव पूरा करने की निरंतर कोशिश करते हैं ।

(७४)

काह रहीम या जगत से, प्रीति गई है टेरि ।

रहि रहीम सर बीज में स्वाण्य स्वाएज हीरि ॥

शब्द—रहीम कहते हैं कि इस जगत से प्रीति यह कह कर जाती गई है कि सब इस जगत में बीज समुच्चों के संग में रहकर जायें और स्वार्थ ही स्वार्थ दिखाई देगा ।

(७५)

अँडम बौड़ रहीम कहि, बैकि सखिऊम पान ।

हस्ती-ठण्डा कुरहड़िम सहुँ ते तखार मान ॥

शब्द—रहीम कहते हैं कि हे एण्ड (बधी) ! तू अपने बिकने पत्तों को

देखकर बोले मैं मत कहूँ तू अपने को तस्कर समझने की भूल मत कर ।  
क्योंकि तस्कर तो दूसरे ही होते हैं जो हाथियों के धाबात और कुम्हारियों की  
बोट सहन करते हैं ।

( ७६ )

करत निपुनई गुन बिना रहिमान निपुन हुपूर ।

मानहु डेरत घिटय बड़ि यहि प्रकार हम क्रूर ॥

अर्थ—जो मनुष्य बिना किसी गुण के बुद्धिमान व्यक्तियों के समझ अपनी  
बड़ाई करता है ऐसा व्यक्ति कवि रहीम कहते हैं कि स्वयं ही मानो कृश पर  
बढ़ कर अपनी मुर्खता की घोषणा करता है ।

( ७७ )

कहि रहीम संपति सगे, बनत बहुत बहु रीत ।

बिपति कसौटी से कसे सोही साथि मीत ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि सम्पत्ति के साथी तो बहुत से हो जाते हैं  
वास्तविक मात्री की पहिचान तो विपत्ति के समय ही होती है जैसे कि स्वयं के  
करेपन की पहिचान कसौटी पर कसने पर होती है ऐसे ही सच्चे साथी (मित्र)  
की पहिचान विपत्ति की कसौटी पर हो जाती है ।

( ७८ )

कहि रहीम बन बड़ि घटे, जात बनिय की बात ।

घट छपू उनको कहा पास बैचि के खात ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि बन के घटने बढ़ने से बनियों की बात  
जान सी जाती है लेकिन जो बात बैचकर मुँहासा कर लेते हैं उनको बन के  
घटने बढ़ने की चिन्ता नहीं होती ।

( ७९ )

कमसा धिर न रहीम कहि सब जानत सब कोय ।

पुरुष पुरातन की सखु क्यों न बँधसा होय ॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि कमला (लकड़ी) कभी स्थिर नहीं रहती



घर्षात् बन नहीं भी स्वामी नहीं होता वह कभी किसी के पास रहता है तो कभी किसी अन्य स्थान पर । बूढ़ बिप्लु की पत्नी होने के कारण भसा कमला क्यों न बचता होनी ? घर्षात् बिच प्रकार बूढ़ की पत्नी बचत स्वभाव की होती है उसी प्रकार नवमी भी बचत स्वभाव की होती है ।

( ८० )

कमला धिर न रहीम कहि लखत घघम जे कोय ।

प्रभु की सो अपनी कहि क्यों न फसीहत होय ॥

अर्थ—कमला (नवमी) कभी कहीं स्थिर टिक नहीं पाती ऐसा रहीम कवि कहते हैं । धीर जो व्यक्ति उसे स्थिर समझते हैं वे प्रथम हैं । क्योंकि बिप्लु बचान् की स्त्री को जो अपना समझते हैं वे अपनी ही फसीहत कराते हैं क्योंकि बिप्लु की पत्नी को अपनी मानना अनुचित है । वात्पय यह है कि नवमी किसी की कभी नहीं होती है इसीलिये उसे बचत स्वभाव का कहा गया है ।

( ८१ )

जैसी परे सो सहि रहे कहि रहीम यह बेह ।

बरती ही पर परत है, सीत घाम जो मेह ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि बीसी इस ॥ पर पड़ती है—सहन करनी चाहिये क्योंकि इसी बरती पर ही सीत रूप धीर बर्षा पड़ती है घर्षात् बिच प्रकार बरती सीत बर्षा धीर बर्षा सहन करती है उसी प्रकार धीर को कुछ कुछ सहन करना चाहिये ।

( ८२ )

रहिमन साक्ष भसी करो, धगुनी धगुन न जाय ।

राग सुमत पय पिघलत हैं, साँप सहज धरि घाय ॥

अर्थ—कविधर रहीम कहते हैं कि साक्ष भनाई करो किन्तु दुष्ट अपनी दुष्टता नहीं छोड़ता । बिच प्रकार मधुर नीत चुनकर धीर दूध पीकर भी साँप का मारने का स्वभाव नहीं आता ।

अलंकार—दृष्टान्त ।

( ८३ )

कहु रहीम कैसे भिन्न बेर केर कर सग ।

वे जोसत रस धापुने समके फाहत भग ॥

अर्थ—रहीम कबि कहते हैं कि केना धीर बेर का एक स्थान पर कैसे निर्बाह हो सकता है क्योंकि बेर के साधारण रूप से हिलने बुलने में ही केने के कोमल पत्ते फट जायेंगे अर्थात् बुष्ट धीर सज्जन का एक साथ निर्बाह कठिन है क्योंकि बुष्ट की साधारण हरकतें ही सज्जन को कष्टकारक हो सकती हैं ।

भावसाम्य—

बुष्ट निकट बसिए नहीं बस न कीबिए बात ।

कदसी बेर प्रसंग से छिड़े कंटकन पात ॥

—बुल्बुल सचसई

( ८४ )

रहिमन छोड़े मरन से तजौ बर पर प्रीति ।

काटे चाटे स्वाम के बुहु भौति बिपरीति ॥

अर्थ—रहीम कबि कहते हैं कि नीच मनुष्यों से प्रीति धीर बेर दोनों ही तजने चाहिये क्योंकि बुष्ट की भौति उनका काटना धीर बाटना दोनों ही अनुचित मान्य पड़ते हैं ।

भावसाम्य—

हिउहु बसो न नीच को नाहिन भसो छोड़ ।

चाट भपावन तन करे, काटि स्वाम बुल बेत ॥

—बुल्बुल सचसई

( ८५ )

बड़े बड़ाई ना करै बड़े न जोसे जोस ।

रहिमन हीरा कब कहै सास टका मेरी मोस ॥

अर्थ—बड़े अपने बड़ाई नहीं करते धीर न वे कभी बड़ी बातें कहते हैं । रहीम कबि कहते हैं कि हीरा कभी अपनी यह बड़ाई नहीं करता कि मेरा सास टका भूख है ।

( ८१ )

बड़े हीन को बुझ सुनै, सेत क्या छर आनि ।  
हरि हाथी तौ तु कब हुती कह रहीम पहचानि ॥

अर्थ—बड़े व्यक्ति हीनों का बुझ सुनते हैं धीर उसके दुःख से अपने मन में क्या का भाव भी नात है । रहीम कबि कहते हैं कि भगवान् विष्णु की गज से कब की पहचान भी जो उसे ग्राह से मुक्ति दिलाई अर्थात् भगवान् का बड़प्पन ही वा जो उन्होंने हीन गज की बधा पर क्या करके बिना पहचान के उसे दुःख से मुक्ति दिलाई ।

अर्थकार—अर्थात्तरस्यास ।

( ८२ )

अरज सुनत अरज तुरत गरज मिटाई आनि ।  
कहि रहीम का बिन हुती हरि हाथी पहचानि ॥

अर्थ—अरज (करिबाब) को सुनते ही इषित होकर तुरन्त ही उसका दुःख निवारक किया । रहीम कहते हैं कि किस बिन हाथी धीर हरि की पहचान हुई भी अर्थात् नहीं हुई भी ।

( ८३ )

जे गरीब सों हित करे अनि रहीम ते लोग ।  
कहा सुखामा बापुरो कृप्यस मिताई लोग ॥

अर्थ—जो गरीबों से प्रेम करते हैं, रहीम कबि कहते हैं कि ऐसे लोग भग्य हैं । कहाँ तो वैष्णव सुखामा धीर कहाँ द्वारिका के अधिपति भगवान् श्रीकृष्ण भला सुखामा उनकी मित्रता के योग्य वा लेकिन फिर भी भगवान् ने सुखामा को मित्र नाम से अपनाया ।

विवेक—सुखामा नाम के गरीब आहार्य हैं श्रीकृष्ण की वचन में मित्रता भी । इस मित्रता को भगवान् ने बखूबी मिथ्या । जब श्रीकृष्ण द्वारिका के अधिपति थे तब सुखामा का बड़ा आदर सत्कार किया वा धीर उसे नम्र सम्पदा शान में भी थी ।

(८१)

रहिमन जगत बड़ाई की कुरुर की पहिचानि ।

प्रीति करे मुख चाटई और कर तन हानि ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि जगत में प्रसन्ना कुरुर की पहिचान वैसी होती है जो प्रीति होने पर मुख से चाटकर छीर परंपरित करता है और और होने से छीर को हानि पहुँचाता है ।

विशेष—अ्यास कवि के नाथ से भी यही बोझ इस प्रकार मिलता है—

अ्यास बड़ाई जगत की कुरुर की पहिचान ।

प्रीति करे मुख चाटई और कर तन हान ॥

(८०)

रहिमन छोछे नरन से होत बड़े नहि काम ।

मझो बमानो न जने सो जूहे के काम ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि छोछे आश्रमियों से बड़े आश्रमियों के काम जैसे ही संकल्प नहीं हो पाते वित्त प्रकार नमाके को सो जूहों के बमके से बनाने में संकल्पना प्राप्त नहीं की जा सकती ।

भावसाम्य—कैसे छोटे नरन से तरत बड़ेनहि काम ।

मझो बमानो बात बर्यों से जूहे के काम ॥

—विहारी सतबई

(८१)

बड़े बड़ाई नहि तन सगु रहीम इतराह ।

राह करौवा होत है कटहर होत न राह ॥

अर्थ—बड़े प्रपन्ना बह्पन्न कभी नहीं तनते बाड़े छोटे भले ही इतराने समें । जैसे राई जैसा छोटा बीज सो फूलकर करौवा हो जाता है लेकिन कटहर कभी राई ॥ समान छोटा नहीं होता ।

अर्थकार—हृष्टान्त ।

(८२)

वसि कुसम चाहत कुसम यह रहीम अकसोत ।

महिमा घटी समुद्र को रावन कबो बरौत ॥

धर्म—रहीम कवि कहते हैं कि वह बड़े बेव की बात है कि कुरे तंग में रहकर मनुष्य धरना बना चाहता है। क्योंकि धरम जैसे कुरे व्यक्ति के संग में रहकर समुद्र की भी महिमा बन गई थी।

विशेष—राबण की सजा समुद्र के तट पर बसी हुई थी घट बब राम सीता को लेने के लिये राबण की सजा की धोर अभियान करने लगे तो उन्होंने समुद्र पर पुल बांधकर उसे पार किया था। समुद्र की कभी गाँवा नहीं गया लेकिन राब ने उसकी इस महिमा को पुल बांधकर कम कर दिया।

फलकार—धर्मान्तरणवाह।

भावताम्य—बुद्ध के संघर्ष से सम्मान बहुत करने।

ज्यों बसमुक्त धरणा से बनन लहो करने।

—दृष्ट सतबई

(२१)

बीन सबन को लसत है बीनहि लखै न कोय।

जो रहीन बीनहि लखै बीनबन्धु सन होय न

धर्म—बीन व्यक्ति सबकी धोर बिहारता है लेकिन उसकी धोर कोई नहीं देखता धर्मात् उसकी परमाह नहीं करते। रहीम कवि कहते हैं कि जो बीनों का ध्यान करते हैं वे बीनबन्धु धर्मात् देखता के समान होते हैं।

(२४)

रहिमन याचकता पहे, बड़े छोड हू अस्त।

नारायन हू को नयो बाधन धाँपुर गात न

धर्म—रहीम कवि कहते हैं कि याचक बनने पर बड़े व्यक्ति भी छोटे हो जाते हैं जैसे कि भगवान् विष्णु बलि से पृथ्वी नीचने पर बाधन धनुष के बराबर छोटे हो गये थे।

विशेष—राजा बलि धमुरी का प्रतापी राजा था। उसके अपने पराक्रम के इम्राकन को छिगता था। भगवान् विष्णु ने इन्द्र को बचाने के लिये बामन का छोटा रूप धारण किया और बलि ने तीन पत्र पृथ्वी राज में माँगी। बलि ने राज देना स्वीकार कर लिया और भगवान् विष्णु ने तीन ही पत्र में उसके सम्पूर्ण राज्य की माँग लिया।

(१२)

रहिमन माँगत बड़ेन की लघुता होत धनुष ।

बलि मक्क माँगन को गये परि बामन को रूप ॥

धर्म—रहीम कहते हैं कि बड़े व्यक्तियों के माँगने से जनकी लघुता भी बिराली हो जाती है । बलि के यज्ञ में विष्णु माँगने गये तो बामन का निराका रूप बरत आया ।

(१३)

मयि बटत रहीम पब, कितों करो बड़ि काम ।

तीन पैस बसुबा करो तऊ बामनो नाम ॥

धर्म—माँगने से सम्मान सदा बटता ही है फिर चाहे कितना ही बड़ा काम क्यों न किया जाये । जबवाम विष्णु ने बसुपि तीन ही पैस में बसुबा को नाप लिया था लेकिन फिर भी बलि से चौक माँगने के कारण उनका नाम सदा के लिये बामन (भिकाारी) ही रह गया ।

भाषासाम्य—सबसे लघु है माँगिबो जाने पेर न चार ।

बलि भी पाँचठ ही गये बापन ठन करतार ॥

—बृन्ध बटसई

(१७)

रहिमन कबट्टु बड़ेन के नाहि धर्म कर सैस ।

भार धरे संसार को तऊ कहावत सैस ॥

धर्म—रहीम कहते हैं कि बड़े लोगों की बात भी धर्मक नहीं होता । सम्पूर्ण पृथ्वी का भार सँभालने वाले योगनाथ भी अपना नाम सोच धर्मात् बचा हुआ रखते हैं ।

धर्मकार—धर्मांतरग्यास ।

(१८)

रहिमन बैसि बड़ेन को सभु न दीजिए भारि ।

जहाँ काम धार्थ सुई कहा कर तरवारि ॥

धर्म—रहीम कहते हैं कि बड़ी वस्तु के पीछे छोटी वस्तु को नहीं फेंक

मा चाहिए क्योंकि वहाँ छोटी सी खुई काम पायी है वहाँ तमवार बेचारी  
या कर सकती है ।

प्रसन्नकार—इष्टास्त ।

( ४२ )

घाव न काहू काम के डार पास फल मूर ।

भीरन को रोकत फिरँ रहिमन कूर बकूर ॥

अर्थ—रहीम कहि कहत हैं कि कुछ व्यक्ति बकूल के पेड़ की भाँति होते  
हैं जो न तो स्वयं किसी काम का होता है और न ही अपने पास के पेड़ों का  
उत्पन्न करता है बल्कि अपने पास के पेड़ों को भी काटों से बेर कर कुछ  
हुँवाता है ।

( १० )

भीरन को सिर काटि के, मसियत सौन लगाय ।

रहिमन कह्ये मुछन की बहिए यही समाय ॥

अर्थ—भीरे का कड़ुवापन दूर करने के लिये उसके उसके ऊपरी सिरे  
को काटकर लकड़ लगाया जाता है । रहीम कहते हैं कि कड़वे मुँह वालों के  
लिये यही उपाय ठीक है ।

( १०१ )

दूर धरत नित सीस वै, कहू रहीम केहि काम ।

बेहि रज मुनि पत्नी तरी, सो बूझत गजराज ॥ ✓

अर्थ—हामी सर्वत्र ही अपने सिर पर बूझ जानता है धतएव रहीम कहते  
हैं कि वह ऐसा क्यों करता है फिर वह चतुका उत्तर भी देते हुए कहते हैं कि  
गजराज वह रज जोरता है जिससे नीचम मुनि की स्त्री बहिष्का कर गई थी—  
इस प्रकार वह भी अपने जटार की कामना से रज की अपने सिर पर जानता  
रहता है ।

विशेष—बहिष्का गौतम ऋषि की पत्नी थी । उसके चरित्र पर सन्देह  
होने के कारण नीचम ने उसे साप से बिबा ना कि तू पापाए हो ना । साप  
ही वह भी कह दिया ना कि भगवान् राम के चरणों की रज के स्पर्श से ही

तेरी मुक्ति होगी । अहिंसा धारण्य पत्थर हो गई और जब भगवान राम बनकपुरी जा रहे थे तो राम के चरणों की धूल का स्पर्श पाकर उसकी मुक्ति हो गई थी ।

(१०२)

जो रहीम भावी कस्तो होति धापने हाथ ।

राम न जाते हरिम सय सोय न राखन साथ ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि भावी (होमहार) कहीं धपने हाथ न होती है अर्थात् नहीं होती । न राम यदि हरिम के पीछे जात और न ही भावा सीधा रावस के साथ जा पाती ।

(१०३)

तब कोऊ सबसों करे राम जुहाय ससाम ।

हित अनहित तब जानिये आ दिन अटके काम ॥

अर्थ—सब लोग जब धापस में मिलते हैं तो स्नेह-व्यवर्धन के लिये राम राम ससाम और जुहार करते हैं लेकिन मित्र और बैरी का पता तो तब चलता है जब कोई काम या अटकता है अतः जो उस काम में भाकर हाथ बटावे—वही मित्र कहा जाता है ।

(१०४)

दुरदिन परे रहीम कहि भूसत सब पहिचानि ।

सोच नहीं बित्त हानि को, जो न होय हित हानि ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि दुरे दिनों में जान पहचान जाने लोग भी भूल जाते हैं—यह बात ही दुःख का कारण है । मन की हानि ही मनुष्य को दुःखी नहीं करती बल्कि उसके हित की हानि न हो ।

विशेष—कहा जाता है कि उपर्युक्त दोहा रहीम ने नन कवि के दिग्गज शोह के उत्तर में लिख भेजा था—

छोटे कहीं नबाब नू, ऐसी चीने रैन ।

ज्यों ज्यों कर ऊ जो करो त्यो-त्यो नीचे रैन ॥



(१०३)

रहिमन नीच प्रसन्न ते नित प्रति साम विकार ।

नीर खोरावित सपुटी माव सहत परिभार ॥

अर्थ—एहीम कवि कहते हैं कि नीचों के साथ से हानि उठानी पड़ती है क्योंकि पानी तो फुरता है बसबड़ी का पान लेकिन मार सहन करनी पड़ती है बिचारे बड़ियाल (बच्चा) को ।

(१०५)

सोत हरत तम हरत नित भुवन भरत नहि बूक ।

रहिमन तेहि रवि को कहा जो पटि सबै उलूक ॥

अ — सूर्य कीटा का निवारण करता है धन्यकार को दूर करता है और उत्तम प्रकाश सब स्थानों में फैलता है—ऐसे पक्षी सूर्य को यदि पल्लु कम करके देखता है तो उससे सूर्य की महत्ता कम नहीं हो जाती ।

आवसास्य—मूरख मन समर्थ नहीं तो न पुनी में बूक ।

कहा नयो दिन को बिनी, बेबी जो न उलूक ॥

(१०७)

रहिमन वही न आह्वये जहाँ कपट को हेत ।

हम तन भारत डेकुनी सींचत अपनो सेत ॥

अर्थ—एहीम कवि कहते हैं कि वही नहीं जाना चाहिए जहाँ कपट व्यवहार हो क्योंकि हम तो मेहनत करके कुप से डेकुनी द्वारा पानी बींचे और कपटी मनुष्य बिना धन के अपना सेत बींच लाते हैं ।

(१०८)

उरग सुरंग मारी, नृपति, नीच जाति हबियार ।

रहिमन इन्हें सम्हारिये, पसटत लय न बार ॥

अर्थ—सर्प छोड़ा स्त्री राजा नीच कुल के मनुष्य और हबियार को घटा सम्हाल कर रखना चाहिए क्योंकि छोड़ी स्त्री भी डील देने पर इन्हें पसटते देख नहीं सकती ।

(१०६)

जो रहीम ओछो सब तो मति ही इतराय ।  
प्यासे से फरबी भयो टेढ़ो टेढ़ो जाय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि जोछा व्यक्ति यदि कष्टि कर जाता है तो परम में बुरी तरह फूला-फूला फिरता है जैसे कि अतराय में प्यासा फरबी बनने पर टेढ़ी जाय बनने लगता है ।

(११०)

रहिमन नीचन संग बसि, जगत कसक म काहि ।  
बूच कमारिण हाथ सखि, सब समुझहि मब ताहि ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि नीच व्यक्तियों का संग करने से भला किसे कष्ट नहीं लगता । अराब बेचने वाली के हाथ में बूच देख कर सब लोग उसे बराब ही समझते हैं ।

प्रसंग—दृष्टान्त ।

(१११)

रहिमन जइसी प्रकृति को नहीं नीच को संग ।  
करिया बासन कर गड़े कासिक सागत संय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि उज्ज्वल प्रकृति के मनुष्यों के साथ नीच व्यक्तियों का संग जचित नहीं होता क्योंकि काले बरतनों को हाथ में लेने से कालिक प्रपञ्च संय को नग जाती है ।

भावसाम्य—‘महुमय’ तन्मो धंवार ज्यों छोटे को संय साय ।

सीरो कर कारो करे, पावो बारे हाय ॥

(११२)

रहिमन जो तुम कहत हो संगति ही गुन हीय ।  
बीच जलारी रसभरा, रस काहे ना होय ॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि यदि संगति मान करने से ही कुछ या जाता तो मर्त्तों के बीच जगने वाले रसमयी पीढ़ों में रस क्यों नहीं होता—बहु मर्त्तों वध के कुछ रस से विहीन रह जाता है ।

( ११३ )

रहिमन भरिया रहूँट की, क्यों छोड़े की बीठ ।  
रीतिहि सनमुझ होत है भरी दिसावे पीठ ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जिस प्रकार रहूँट का पड़ा जानी होकर सामने जाता है और बरत होने पर पीठ दिखा देता है उसी प्रकार छोड़ा यादनी भी नपीबी होने पर ही सामने जाता है लेकिन बनी हो जाने पर हमेशा पीठ ही दिखाता है अर्थात् वात भी नहीं करता ।

भाव सान्ध—हरिबंस घरहुन की घरी क्यों कुमीत की ईठ ।

जब जानी तब समझी जब संभर तब पीठ ॥

( ११४ )

छोटिन सों सोहें बड़े, कहि रहीम यह रेख ।  
सहसन को हय बाधियत सँ बमरो की मेख ॥

अर्थ—छोटों से बड़े भी मोहित होते हैं—यह पत्थर पर लिखी रेखा के समान निश्चित बात है क्योंकि हजारों बमरे की कीमत का चौड़ा बमड़ी (बस कीड़ी) की बूँटी से बंधा रहता है ।

( ११५ )

ए रहीम बर बर फिरहि, मांगि मनुकरो जाहि ।  
घारों घारी छोड़िए, ये रहीम अब माहि ॥

अर्थ—विपत्ति में जब बरबादे बरबादे भोजन की बीज के निचे छिरना पड़ता है । रहीम कवि कहते हैं कि अब दोस्ती का भरोसा मत करो क्योंकि दुरे बरत में काम आने वाले दोस्त अब नहीं रहे ।

अन्व अर्थ यह भी हो सकता है—

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं विपत्ति काल होने के कारण अब हमें डार-डार बर बटकना पड़ा रहा है और मिठा से जीवनयापन करना पड़ रहा है । अब मिशों को हमारी मिशवा को छोड़ देना चाहिए क्योंकि अब हम पहले जैसे सामर्थ्यवाद् नहीं रहे जो किसी मित्र की सहायता कर उन्हें ।

(११६)

अथम बचन ते को फस्यो, बैठि ताड़ की छाँह ।

रहिमन काम न आय है ये नीरस जग माँह ।

अर्थ—दूरे बचन बोलने वाला ऐसा कौन है जो उलझि करता है । ये ताड़ के पेड़ के समान होते हैं जिसकी छाया का कोई मुक्त महीं ले पाता । ऐसे व्यक्ति ताड़ के बूँद की भाँति किसी काम नहीं आ पाते न तो उनकी छाया का कोई लाभ उठ पाता है और न ही उसके फल होते हैं जिससे किसी प्राणी की सुखा वृद्ध हो सके ।

(११७)

असभय परे रहीम कहि, माँघ जात लमि लाग ।

ज्यों सखमन माँगन गए पारासर के नाम ॥

अर्थ—दूरे विनों में रहीम कवि कहते हैं लग्ना को स्वाय कर किसी के घर मानना पड़ता है जैसे सखमन को बुविनों में पारासर ज़पि के घर नाम माँगने वाला पड़ा था ।

(११८)

अनि रहीम काम पङ्क को, मधु जिय पिपल प्रघाय ।

उदधि बड़ाई कौन है, जगत पिघासो काय ॥

अर्थ—पङ्क का यह काम बन्धवार का काम है जिसमें से छोटे बीज देत कर कर पीते हैं । यना उस समुद्र की गया बड़ाई जहाँ से सारा संसार व्याप्त नाँट कर जाता है ।

बाधताम्ब— तावा तबुरपि सेव्यो मवति न कृपसो मद्दानपि ।

कृपोऽन्त स्वाहुनन शील्य मोक्षस्य न समुद्र ॥

—संघर्ष

(११९)

कौन बड़ाई असधि मिलि, गँग नाम भो धीम ।

देहि की प्रभुता नहीं धटी पर घर गए रहीम ध

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि कौन ऐसा है जिसका दूसरे के घर जाने

पर बड़प्पन न पटा हो । गंगा इतनी बड़ी थीर महिमाधारी नहीं है लेकिन सागर में जाने पर उसकी महिमा भी बरूँ जाती है धर्मात् सागर में मिल कर उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है ।

(१२०)

सरस बह्यो प्रथम पश्यो, नृपति निठुर मन कीन ।

कहु रहीम कैसे बिए, पोरै बल की मीन ॥

अर्थ—अप्य बड़ बड़ा है और प्रथम पट गया है तथा राजा ने भी निठुर मन कर लिया है । रहीम कवि कहते हैं कि ऐसी स्थिति में बीजा जैसी प्रकार कठिन है विस प्रकार मोटे से बल में मछली का बीजा कठिन होता है ।

(१२१)

बैसी जाकी बुद्धि है, बैसी कहै बनाय ।

ताको बुरा न मानिये, सैन कहाँ सुँ जाय ॥

अर्थ—बैसी जिसकी बुद्धि होती है वैसा ही वह बनता है । अल्प बुद्धि वालों की बात का कुछ नहीं मानना चाहिए क्योंकि उनसे सेना ही क्या होता है ।

(१२२)

जिहि प्रंचल बीपक बुरयो, हृम्यो सो ताही मात ।

रहिमन असमय के परे मित्र सखु हूँ जात ॥

अर्थ—जिस छाड़ी के प्रंचल की घोट में बीपक को छिपा कर स्त्री पवन से उसकी रक्षा करती है उसी प्रंचल को बीपक बच्चा होता है । रहीम कवि कहते हैं कि बुरे दिनों में तो मित्र भी इसी प्रकार धनू हो जाते हैं ।

(१२३)

बोनों रहिमन एक से, जो सौँ बोसत भाहि ।

बान परत हैं काक पिक भटु वसंत के भाहि ॥

अर्थ—बीजा और क्रोयल दोनों एक समान होते हैं—बस एक के नहीं बोसते तब तक इसकी पहिचान नहीं हो पाती लेकिन वसंत ऋतु बर पसती है तो क्रोयल की मधुर धावाप से दोनों में अंतर स्पष्ट हो जाता है ।

भावताम्—भले बुरे सब एक से ज्यों ज्यों बोलत माहि ।

बान परत है काक पिक, जगु बसत के माहि ॥—बृन्द सतसई

(१२४)

धम धोरो इज्जत बड़ी, कहि रहीम का बसत ।

जैसे कुल की कुल बधू बिचड़न माहि समात ॥

अर्थ—धन यदि बोझा है लेकिन इज्जत बहुत है तो रहीम कबि रहते हैं  
क वह कोई हेन बात नहीं है । सम्मानित कुल की कुलबधू अपने मान की  
सा तो बिचड़ों में भी कर सेठी है ।

(१२५)

बैनबार कोठ और है मेखत सो दिन रम ।

सोग भरम हम प बरें, पाते नीचे लैन त

अर्थ—प्रस्तुत बोझा कबि रहीम ने अकस्माती दरबार के धन्य प्रसिद्ध कबि  
मंग के इस बोझ के उत्तर में लिखा था—

“नीचे कहाँ नवान चु, ऐसी बेनी रैन ।

ज्यों-ज्यों कर ऊँचे करो त्यों-त्यों नीचे नन ॥

अर्थ—देने वाला तो कोई और है (अर्थात् अकाल है) जो दिन रात देने  
के लिये मेजा करता है लेकिन लोग भ्रम बध मुझे देने वाला समझते हैं चूँकि  
यूँ ही मुझे देने वाला कहा जाता है अतः मेरी दृष्टि संकोचबध नीचे झुकी  
रखी है ।

(१२६)

रहिमन बसुवा नयन डरि, निस कुल प्रगट करेह ।

माहि निकारी गेह ते कस न भेद कहि हैह ॥

अर्थ—रहीम कबि कहते हैं कि प्राणु नयनों से डरक कर मन का बुद्ध  
प्रकट कर देते हैं जिसको भी घर से निकालते हैं वह घर का भेद दूसरों से  
कह ही देता है ।

(१२७)

रहिमन अपने योत को सबे बहुत उरसाह ।

मृग उखरत आकास को, भूमी समत बराह ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अपने बंध की कृति को तब कोई चाहते हैं।  
 मृत्यु मग्नमा के बाह्य हैं इतिहास के पृथ्वी पर रहते हुए भी आकाश की ओर  
 उड़ते हैं। और जो कि मयवान् बाह्य हिरण्यक को मारकर पाताललोक के  
 पृथ्वीलोक को लाये थे इसीनिये सुख (बाह्य) मृति को सोचते हैं। तत्पर  
 यह है कि प्रत्येक प्राणी अपने-अपने बंध और बाध के अनुसार काम करता है।

( १२८ )

रहिमन सबके बिरह कहूँ, जिनकी छाह रंभीर ।

आमन बिज-बिज बेसिघत सेंहुड़ कु ब करीर ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि सब के वेद नहीं होते जिनकी छाया बन  
 होती थी सब तो हर बाध में कहीं सेंहुड़ कटिहार मझी कु ब और करीर  
 ही देखने का मिलते हैं।

( १२९ )

ऊगत जाही किरन सों अथवत ताही माँति ।

स्यों रहीम मुज मुज सब, बहुत एक ही माँति ॥

अर्थ—जिन किरनों से सूर्य और चन्द्र उगते हैं वन्हीं किरनों से अस्त  
 हो जाते हैं, रहीम कवि कहते हैं कि इसी प्रकार मुज-मुज एक ही अर्थ  
 करते हैं।

( १३० )

यों रहीम मुज मुज सहुत बड़े मोय सहु माँति ।

अवत नाम बेहि माँति सों, अथवत ताही माँति ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि बड़े मोय उसी प्रकार समान मात्र के मुज  
 मुज को सहन करते हैं बिना प्रकार अथ वैसे अवत है उसी भाँति अस्त भी  
 हो जाता है।

( १३१ )

यह रहीम माने नहीं बिल से नवा न होय ।

अस्ता और अमान के नए हैं अथगुन होय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अस्ता और, अमान नाम होने पर भी

दिख से नम्र नहीं होते क्योंकि बीठा जब नम्र होकर झुकता है तो वह धाक-मस करने के लिये उछलता है और भी नम्र होकर बलहानि करता है और कमान भी झुकने पर ही धीर फेंक कर प्राण हानि करती है यद्यपि तीनों का नम्र होना (झुकना) बिजानटी होता है और हानिप्रस होता है ।

भावसाम्य—नमन नमन बहु संतरा नमन-नमन बहु बान ।

ये तीनों कहते हैं बीठा और, कमान ॥

धीर भी—सुखन सबसे बनि गनहु को उर सुख न होई ।

बीठा और कमान छौं नहि आपनी रोई ॥

( १३२ )

याते जायों मन मयो, जरि जरि भस्म वसाय ।

रहिमन जाहि लगाइए सो क्यो ह्य जाय ॥

प्रश्न—येरा मन छायाइ इतीनिये बस कर भस्म हो गया है क्योंकि बिसे भी इससे लबाटा है वही क्या हो जाता है ।

( १३३ )

रहिमन जिह्वा बाजरी कहि सरग पतास ।

भापु तो कहि भीतर रही सुती सात कपाल ॥

प्रश्न—कबिबर रहीम कहते हैं कि यह जिह्वा (जवान) तो बाजरी होती है । यह तो स्वयं धीर पाताल तक भी उखी छीनी बातें बक जाती है लेकिन भाप तो कह कर मुँह के भीतर हो जाती है और धूँटे जाने पड़ते हैं फिर को ।

( १३४ )

रहिमन जो रहियो कहै, कहै जाहि के बाब ।

जो दासर को निंसि कहै, तो कचमची बिबाब ॥

प्रश्न—रहीम कहते हैं कि यदि मैं से रहना चाहते हो तो मासिक की जं में ही निमाधो । यदि मासिक दिन की रात बताये तो तुम उसके समर्थन में धाकाध में तारे धीर बिबाब दो ।

भावसाम्य—जाट रहे गुनि जाटनी यही गाँव में रह्यो ।

ऊट बिबाब से कई, तो हाँसी-हाँसी कह्यो ॥



(११३)

रहिमन तब सगि ठहरिय, बाब मान सममान ।

घटत मान देखिय अबाहि, तुरतहि करिय पयान ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि उसी समय तक रहना चाहिये जब तक कि शान मान और सम्मान रहे । और जब भी मान घटता बीजे तो तुरन्त ही वहाँ से चल देना चाहिये ।

(११६)

रहिमन रहियो बा मनो जो नौ सीस समूख ।

सीस डील सब देखिय, तुरत नीजिय कुछ ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि रहना वही समय तक उचित है जब तक कि पूरा सम्मान बना रहे और जब सम्मान पर धाँच धावे तो वहाँ से तुरन्त ही प्रस्थान कर देना चाहिये ।

(११७)

रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब धून ।

पानी गये न ऊबरे मोती मानुस धून ॥ -

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि पानी आवश्यक ही रहना चाहिये क्योंकि पानी के बिना सब धूना हो जाता है अर्थात् स्वयं हो जाता है । पानी बसे जाने से पुन मूख्य नहीं रह जाता क्योंकि यदि मोती का पानी (सुसज्जी भाव या कान्ति) कभी गई तो वह बेकार हो जाता है । उसी प्रकार मनुष्य से पानी (भारत-सम्मान) कला गया तो वह प्रविष्टाहीन मनुष्य भी हो बीड़ी का रह जाता है और ऐसे ही यदि जूने में से पानी (जल) जाता है तो जूना बेकार हो जाता है ।

(११८)

संबल के मारिहु गए, धौधुम धून न सराहि ।

क्यों रहीम बाघतु जब मरहा तू अधिकहि ॥

अर्थ—नीच व्यक्तियों के मरने पर भी उनके अनुश्रुतों का उत्पात कम नहीं होता । बिना प्रकार कि बाघ द्वारा मारे गये मनुष्य की भारमा मनुष्य यही बाघ का रूप धारण कर अधिक उत्पात मचाती है ।

विशेष—जो मनुष्य बाघ द्वारा मारा जाता है उसके लिये एक बहुततरा निर्मित करके उसकी धारमा की पूजा की जाती है क्योंकि उसकी धारमा दूसरे जन्म में मनुष्य भली भाँति का रूप धारण कर अधिक उत्साह मचाती है।

(१३९)

रहिमन छोटी घाबि को सौ परिनाम सज्जाम :

सीते दीपक लम भजै, कज्जस वमन कराय ॥

अर्थ—छोटी कहते हैं कि यदि प्रारम्भ बुरा है तो अन्त में उसका गतीना भी बुरा होता है वैसे दीपक छुक में जलकर का घसल करता है तो अन्त में वह काजल का भी वजन करता है अर्थात् काजल भी खो जाता है।

(१४०)

मुकता कर, करपूर कर, चातक बीजन ओय :

ये तो बड़ी रहीम नल स्याल-बदन विप होय ॥

अर्थ—स्वाति नक्षत्र का जल महत्वपूर्ण होता है क्योंकि बीबी में वह मोती बनता है, केने में कपूर बनता है चातक का बीजनदायक होता है लेकिन सर्प के मुख में पड़ कर विष हो जाता है।

(१४१)

कदली सीप भुजंग-मुल स्वाति एक गुण तीन ।

जसो संगति बँटिये, तैसोई फल बीन ॥

अर्थ—स्वाति नक्षत्र का पानी तो एक ही होता है लेकिन तीन स्थानों पर अपने तीन गुण प्रकट करता है। केने के पत्तों पर स्वाति नक्षत्र का जल कपूर बनता है, सीप के मुख में पड़ने से मोती बनता है तो सर्प के मुख में पड़ने से बड़ी विष बन जाता है। वैसे संगति में बीठा जाता है बीठा ही फल मिलता है।

विशेष—(१) ऐसा प्रसिद्ध है कि स्वाति नक्षत्र का जल केने पर गिरने से कपूर बीबी के मुख में गिरने से मोती बीर सर्प के मुख में गिरने से बहर बन जाता है।

(२) मूरदास ने इसी भाष के साम्य पर लिखा है—

'छीप भयो मुक्ता भयो क्यली भयो कपूर ।  
अहियुक्त भयो तो बिच भयो संगत के फल मूर ॥

(१४२)

मूढ़ मण्डसी में सुजन, ठहरत नहीं बिसेखि ।  
स्याम कंचन में सेत ज्यों बूरि कीजियत बैखि ॥

अर्थ—मुक्तों की मण्डली में सुजन नहीं टिकपाते जैसे कि काले बालों में  
तो सफेद बाल को निकास दिया जाता है ।

(१४३)

भसो भयो घर तै छुट्यो हस्यो सीत परि छित ।  
काके काके मगत हम, अपन पेट के छेत ॥

अर्थ—मुढ़ भूमि में बड़ है बटकर गिरा हुआ फिर मानो इसलिये हैसता  
है कि बली छुट्टी मिली अब पेट के काठिर सबके सामने झुकना तो न पड़ेगा ।

(१४४)

भोल गिरी पखान की अररामो यहि ठाम ।  
अब रहीम बोझो यहि को लामे केहि काम ॥

अर्थ—पत्थरों की बीमार गिरी तो अरराम की आबाद में गिरा हुआ पत्थर  
कहता है कि अब कील का परवर कहाँ काम आवेगा । क्योंकि सभी पत्थर तो  
अब अलग ही आवेंगे ।

(१४५)

भूप गगत सधु गुमिन को, गुमी लज्जत सधु भूप ।  
रहिमन गिरि ते भूमि सौं सखीं तो एक रूप ॥

अर्थ—राजा गुणवान् मनुष्यों को अपने समक्ष छोटा मानता है जबकि  
गुणवान् मनुष्य राजा का छोटा समझते हैं । 'रहीम' कवि कहते हैं कि परबत से  
परती तक कोई भी बड़ा-छोटा नहीं है—सभी को समान समझना चाहिये ।

(१४६)

बिगरी बात खने नहीं साज करौ किम कोय ।  
रहिमन फाटे रूप पा मये स साजान होय ॥

प्रश्न—बात अब एक बार बिनड जाती है तो फिर नहीं बनती चाहे लाख रुपाय बाब में किये जायें । खीम कबि कहते हैं कि दुब के एक बार फट जाने से फिर बिटना भी उसे मघा बाये बससे मम्बन नहीं बिकाना जा सकता ।

(१४७)

यद्यपि अरबनि अनेक हैं कूपबंत सरितास ।

रहिमन मानसरोवरहि मनसा करत मरास ॥

प्रश्न—यद्यपि पृथ्वी पर अनेक नहरे जल के कुण्ड और झीलें हैं लेकिन इतने ही मानसरोवर में ही अपनी इच्छा से भीड़ा करना पसंद करता है ।

भावसाम्प्र— यद्यपि अनेक सुख तोय तामु रसवान ।

संतत तुबसी मानसर, तपि न तबहि मरास ॥

—तुलसी

(१४८)

मानसरोवर ही मिले हसनि मुखा भोग ।

सकरिम भरे रहीम सर बक-बास कनहि बोय ॥

प्रश्न—मानसरोवर में ही इंसों को मुख चुपने को मिलते हैं—अर्थात् मानस में ही संत भोग मुक्ति को बोकते हैं सरोवरों में तो छोटी मछलियाँ भी रहती हैं जो बजुनों के बच्चों के बाने के लिये ही रहती हैं अर्थात् सांसारिक विषयों में तो तुच्छ बुद्धि के लोग ही लिप्त रहते हैं ।

(१४९)

रहिमन निज मन की धिया मगही राखो गोय ।

सुनि भठिसेहु भोग सब बीति न।सेहु कोय ॥

प्रश्न—खीम कहते हैं कि अपने मन की धिया को मन के बीतर ही धिया कर रखना चाहिये क्योंकि धिया को सुनकर भोग इतना भजे ही नै—जैसे बाँट कर कम करने वाला कोई नहीं होता ।

(१५०)

रहिमन निज सम्पति बिना कोज न बिपति सहाय ।

बिनु पानी को बसल को, महि रबि सक बचाय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि पास में पैदा न रहने पर कोई भी विपत्ति में सहायता नहीं करता। सूर्य जो कपल को बिभाटा है—पानी न होने पर नहीं कमल को मुखा डालता है।

(१५१)

जब सति बिलस न आपुने तब सति मित्र न कोय ।

रहिमन संकुच धंनु धिनु, रवि नाहिन हित होय ॥

अर्थ—जब तक अपने पास बन नहीं है तब तक कोई मित्र नहीं होता क्योंकि कमल को विकसित करने वाला सूर्य भी पानी के सूख जाने पर उन्हें मुखा डालता है।

भावसाध्य—

कुसमय भीठ काको कथन ।

कमल को रविरत्न हित है कष्ट जति छठ बदन ।

बटत बारिज मयो वाक्य करत कथन नहन ।

—सूर

(१५२)

जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सबत कुसग ।

बन्धन बिय व्यापत नहीं सपटे रहत सुखग ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जो अच्छे स्वभाव के समुच्च होते हैं उनको कुपि संवत्ति भी बिनाड नहीं पाठी क्योंकि बाहरीसे सर्व बन्धन के बंधनों से छिपते रहने पर भी छत पर कोई बाहरीला प्रभाव नहीं डाल पाते।

(१५३)

जो रहीम गति बीप की कुल कपूत पति सोय ।

बारे उभिपारी लये, बड़े धँबिरो होय ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि बीपक धीर कुपुन से एक ही रखा होती है। बीपक जब बलता है धीर कुपुन वास्त्यावस्था में होता है तो प्रकाश फैलाता है (वास्त्यावस्था में कुपुन भी प्रसन्नता प्रदान करता है) लेकिन जैसे ही बीपक बढ़ता है (बुझता है) धीर कुपुन बढ़ता है (बढ़ा होता है) तो धन्वकार फैलाता है अर्थात् अपमय फैलाता है कमल भाता पिता को निराध होना बढ़ता है।

(११४)

ओ रहीम गति बीप की, सुत सपुत की सोय ।

बड़े अजेरो तेहि रहे, गए अजेरो होय ॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि बीप की भाँति ही सपुत की भी स्थिति होती है क्योंकि जैसे बीपक प्रग्नानित होने पर आह्लासदायक होता है वैसे ही सुपुत्र बढ़ा होने के साथ-साथ माता-पिता के बिने प्रसन्नता का कारण होता है । और बीपक और सुपुत्र दोनों ही के जाने जाने से (समाप्त हो जाने से) अन्धकार मर्णात् दुःख का कारण है ।

(११५)

रहिमन करि सम बस नहीं मानत प्रभू की वाक ।

बाँत बिबाधत बीम हूँ बलत भिसाबत नाक ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि हाथी के समान अलिखाली और कोई नहीं है लेकिन वह अलिखाली हाथी भी प्रभू का सम्मान करता है । इसीलिए वह उनके समस्त बातें बिबाध कर अपनी बीमता का प्रदर्शन करता है और सूँ को धरती से घटाकर बजाने से मानो नाक रमकता हुआ बजता है ।

(११६)

रहिमन कहत सुपेठ सों, क्यों न भयो तू पीठ ।

रीते अमरोते करें, भरे बिगारत बीठ ॥

अर्थ—रहीम कवि पेठ को सम्बोधित कर कहते हैं कि यह पीठ क्यों न हो बना क्योंकि बाली होने पर तो यह पाप करवाने को प्रामाणा होना चाहिए पर पेठ भर होने पर वह नज़र को बिगाड़ने वाला अर्थात् बहमासी करने पर सतक हो गया ।

(११७)

रहिमन अपने पेठ सों, बहुत कह्यो समुदाय ।

ओ तू अमनाए रहे, तो सों को अमदाय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहत हैं कि अपने पेठ से मैंने बहुत समझा कर कहा कि तू यदि बिना बीज के खेगा तो तू अमदायेगा ।

(१२८)

कैसे निबहै निबस जग, करि सबसन सों वीर ।  
रहिमम बधि सागर बिये, करत मगर सों वीर ॥

अर्थ—निबस मनुष्य सब मनुष्यों से घबरा नहीं करती चाहिये क्योंकि रहीम कवि कहते हैं कि सागर में रह कर मगर से वीर निब नहीं सकता ।

(१२९)

काज परे कछु घोर है, काज सरै कछु घोर ।  
रहिमम भैवरी के भए नवी सिराबत सीर ॥

अर्थ—काम पड़ने पर वस्तु का मुख्य ध्येय होता है और काम निकल जाने पर उसी वस्तु का मुख्य दुख भी हो जाता है रहीम कवि कहते हैं कि विवाह की धीवरों के समय तो सीर को सिर पर रखकर घाघर दिया जाता है और काम निकल जाने पर उसे नदी में बहा दिया जाता है ।

(१३०)

काहु कामरी पामड़ी, जाइ गए से काज ।  
रहिमम भुख बुताइये, कस्यो निभे घनाज ॥

अर्थ—कम्बल हो या रेखमी बहुमुख कपड़ा—इससे क्या बनता-बिगड़ता है काम तो जाइ निकालने से है । रहीम कवि कहते हैं कि घनाज कीमती हो या सस्ता इससे क्या ? भुख बात तो भुख का ध्यान करना है । जो भुख किसी भी प्रकार के धनान से भिट सकती है ।

(१३१)

छिमा बड़म को चाहिए, छोटिन को उत्पात ।  
का रहीम हरि की घट्यो, जो मृगु भारी भास ॥

अर्थ—बड़ों को दया करना छोटा होता है और छोटों को उत्पात मचाना । रहीम कवि कहते हैं कि भयवान् विष्णु का इसमें क्या बट गया जो मृगु बाइल ने उनके बलस्थल पर काठ मारी ।

विरह—ऐसा पौराणिक कथाकाल है कि एक बार मृगु ने बड़ा विष्णु

धीरे-धीरे की सहृदयता धीरे-धीरे की परीक्षा लेनी चाहती। इसी उद्देश्य से प्रेषित होकर उन्होंने धीरे-धीरे में खेवनाग की शम्भा पर छोड़े हुए मयबाग मिथु के छड़ी पर सात मार कर बघाना चाहा। मयबाग बात लगने से बच पड़े धीरे मनु की इस बेजा हरकत पर बजाय गुस्सा होने के बड़ी विनम्रता धीरे परित्याग से मनु के चरखों को बचाते हुए बाले—‘मयबाग मेरे कठोर बकान्त से आपके कोमल चरणों में चोट लागई होगी यत’ मैं इसे बचा दू। मनु को मयबाग की धीरे-धीरे-धीरे तथा बकान्त का पूर्ण परिचय मिल गया।

(१६२)

लहर, कुन, कांसी, सुती, बर प्रीति सबपाम।

रहिमन बाले न बख, जानत सकल कहान।

धर्म—कुसलता कुन कांसी प्रसन्नता कबुता प्रेम धीरे साराब का पीना बाले से भी नहीं बचता है धर्मत्व प्रकट हो ही जाता है धीरे ससार के सभी लोग जान लेते हैं।

(१६३)

रहिमन बुराइन के परे, बड़ेम किए घटि काज।

पाँच कप पाँचव भए रणबाहुक नसरार।

धर्म—रहीम कवि कहते हैं कि बुरे दिनों में बड़े व्यक्तियों ने भी छोटे काम किये हैं। पाँच पाँचवों ने अपने बुरे दिनों में पुनः-पुनः कप बारस कर राजा बिट्ट के बड़ी नीकरी की तथा राजा नल ने राजा अतुपण के सारणी बने।

विशेष—पाँचों पाँचव हुए में द्वार जाने पर सत्ताय बास किया था धीरे राजा बिट्ट के बड़ी प्रमग-प्रमग बेश बारस करके नीकरी की थी। इसी प्रकार राजा नल हुए में सब कुछ द्वार बये धीरे अपनी पत्नी बमर्सी को छोड़ कर राजा अतुपण के रज के हाँकने वाले सारणी बने।

(१६४)

कोट रहीम अनि काहु के द्वार गए पछिताय।

संपत्ति के सब जात है बिपत्ति सबे से जाय।

धर्म—रहीम कवि कहते हैं कि किसी के द्वार पर जाने से पछताना नहीं



बाह्यसे क्योंकि कमवान् के पास तो सभी जाते हैं और मनुष्य को विपत्ति नहीं है बाकी अर्थात् विपत्ति में तो भटकना ही पड़ता है ।

( १९३ )

होय न जाकी छाँह छिग फल रहीम अस्ति हूर ।

बढ़िहू तो बिनु काम ही जैसे तार झरूर ॥

अर्थ—जिसकी छाया पास में नहीं होती और फल भी बहुत दूर होते हैं ऐसे ठाढ़ और झरूर के बूझों का बढ़ना अर्थ ही होता है क्योंकि छाँह न तो उसकी छाया से छीनलता ग्रहण कर पाते हैं और न ही उनके फलों से छुवा की तृप्ति कर पाते हैं ? रहीम का तात्पर्य ऐसे मनुष्यों से है जो धारों तो बढ़ते जाते हैं लेकिन उनसे किसी भी मनुष्य को लाभ या सहायता प्राप्त नहीं होती इसलिए उनका कोई महत्व नहीं होता ।

अलखुर—अन्वोक्ति

( १९४ )

मनसिज माली की उपज कही रहीम नहि जाय ।

फल क्यामा के उर लगे, फूल क्याम उर आय ॥

अर्थ—रहीम कवि कहते हैं कि कामरेज कपी माली की उपज से बारे में कुछ कहना कठिन है क्योंकि फूल तो क्याम के हृदय में उपजते हैं अर्थात् काम का प्रान्त क्याम के हृदय में उमड़ता है और फल क्याम के हृदय पर गिरता है अर्थात् काम को उदीप्त करने वाले स्तनों का उदय क्यामा (मायिका) के मस्तक पर होता है ।

भावसाध्य— रोमाञ्चित कोमल लता भावी दिव के बात ।

कुचफल देखत पीव के धँस धँस फूलत बात ॥

—बसवंत सिंह

( १९५ )

रहिमम प्रीति न कीजिए, बस खीरा ने कीम ।

अगर से तो दिल मिसा भीतर फाँसे तीन ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं ऐसी प्रीति मत कीजिए वही कि खीरा ने की

विषका दिव (विषा) तो ऊपर से मिला हुआ बीकता है लेकिन भीतर तीन फेंके फूटो हुई होती हैं ।

(१६८)

मलकीमूरी बातें कर, सोबत जारी होय ।

ताहि सिखाय अगायबो रहिमम उचित न होय ॥

अर्थ—जो न कहने योग्य बात करें तथा जो आयते हुए भी छोटे रहते हैं प्रवाद बानबूझकर अज्ञान में पड़े रहना चाहते हैं रहीम कहते हैं कि ऐसे व्यक्तियों को धीक देना तथा अज्ञान उचित नहीं रहना ।

भावसाम्य—

(१) अनुचित सुपेसि कुटीसि पत जायत ही रह होय ।

उपदेशबो अनाइबो लुबसी उचित न होय ॥

—सुसली

(२) बाबबूझ अकुसल करे, तासों कहा बसाय ।

जायत ही सोमत रहे, बैसे ताहि बनाय ॥

—सुसली

(१६९)

अनुचित बखल न मानिए, अबपि भुरायसु भाड़ि ।

हैं रहीम रसुनाब से सुनस भरत को बाड़ि ॥

अर्थ—रहीम यदि कहते हैं कि अनुचित बात को कभी स्वीकार नहीं करना चाहिये बाहे वह पुत्र द्वारा बीकई कठिन धाजा क्यों न हो । बी रामचन्द्र बी ने पिता का बचन याद कर बनबास लिया लेकिन उनके छोटे भाई परत ने भुलने में ही धाजा न मानकर राज्य ग्रहण नहीं किया तो राज्य के इस स्थान पर के ल्हाज से कम नहीं बताया जाता ।

(१७०)

धन रहोम मुसकिम पड़ी, गाड़े बोऊ काम ।

सचि से तो जग मही भूटे मिलें न राम ॥

अर्थ—रहीम यदि कहते हैं कि धन बड़ी कठिन परिस्थिति हो गई है क्योंकि दोनों ही काम कठिन हैं क्योंकि यदि अल्प पर चलता है, न

बीना कठिन है और अस्वस्थ का सहारा देता तो है तो उस की प्राप्ति (सम्पत्ति) कठिन है ।

(१७१)

अनुचित उचित रहीम सधु करहि बड़न के खोर ।

क्यों सासि के संयोग से पचवत घाग बकोर ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि यदि छोटे अनुचित कर्म करते हैं तो बड़ों का सहारा लेकर ही । क्योंकि बकोर (बो छोटा है) बग्न (बो बड़ा है) के रूप पर भुज्य होकर ही बंगारे का वाता है ।

(१७२)

आवत काज रहीम कहि गाढ़े बन्धु सनेह ।

औरन होत न पेड़ क्यों, यामे जर बरेह ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि समय पर पुराने मित्रों को स्नेह ही काम आता है जैसे कि बट वृक्ष की छाछावें भूमि में बँस कर वृक्ष की जड़ें बल जाती हैं और इस प्रकार उसकी रक्षा करती रहती हैं ।

(१७३)

सर सुखे पण्खी जड़ औरे सरन समाहि ।

बीन मोन बिन पण्ख के कहु रहीम कहै जाहि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जब एक शरीर का जल सूख जाता है तो पक्षी जड़ कर दूसरे शरीर की छाया में बसें जाते हैं किन्तु वैधायी मत्तमियों के तो बँस नहीं होते बसायो वे कहाँ जायें ?

(१७४)

हित रहीम हुतळ करे जाकी जाही बिसात ।

नहि यह रही म कह रही रही कहूम को दात ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं जिस अनुपम्य की जितनी छानि है उसको घटना ही परोपकार करना चाहिए क्योंकि संसार में यह या वह कोई वस्तु नहीं रह जाती केवल कहने के लिए बात रह जाती है कि अनुक में कितना उपकार किया या कितना अपकार किया जायि ।

(१७१)

मैं रहीम गति बड़न की क्यों तुरंग व्यवहार ।

बागु बिकाबत आपु तन सही होत असवार ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जोड़ा अपने घरम जोड़े से एक पगवा बैठा है और सवार का बिन्दु बन जाता है । जिस प्रकार जोड़े का यह व्यवहार है उसी प्रकार का व्यवहार बड़े साय करते हैं । वे दूसरों का उपकार करने के लिए स्वयं कष्ट सहन कर लेते हैं ।

बिधेय—कहा जाता है कि अकबर के सासन काल में एक जना बसाई गई थी । बूढ़सवार सेना में सवार का जो नंबर होता था वह जोड़ा गरम करके जोड़े के बरीर पर शाय दिया जाता था । इस प्रकार नंबर तो सवार का पड़ता था पर कष्ट जोड़े को सहन करना होता था ।

(१७२)

रहिमम अती न कीबिये, गहि रहिए निज कानि ।

सँजन अति फूले तरु बार पात की हानि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि किसी भी काम में सीमा से अधिक नहीं बढ़ना चाहिए अपनी मर्दावा का पालन करते रहना चाहिए जैसे सहजनी के वृक्ष में सब फूल लगते हैं सो अत्यधिक मात्रा में लगते हैं और इससे उसे पत्तों और शाखाओं की हानि सहनी पड़ती है और फिर उसके सारेही पत्ते पड़ जाते हैं ।

(१७३)

करम हीन रहिमन लको यस्व्यों धके घर और ।

बिग्तम ही बड़ लाम के जागत हूँ जो भोर ॥

अर्थ—कवि रहीम कहते हैं कि वेबो जाग्य-हीन और बनी के घर में बोरी के लिए धुना पर वह इस विचार में ही पड़ा रहा कि किस वस्तु की बोरी से बड़ा साम होगा । यह विचार करते करते ही प्रातः काल हो गया ।

बिधेय—पूर में भी इन प्रकार का भाव लोगों के सम्मुख में प्रकट किया है—

यों झूली क्यों चोर घरे, चर चोरी निधि न गई ।

बबलत मोर प्रमो पक्षिप्रापी कर तें धाँकि गई ॥

( १७८ )

कहि रहीम इक बीप तें प्रकट सब बुति होय ।

तन समेह बैसे कुरे हग बीपक लख होय ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि एक ही बीपक से सब चोर प्रकाश हो जाता है । तब छरीर में प्रेम कैसे छिपा रह सकता है क्योंकि वहाँ तो नेत्र कपी को बीपक लख रहे हैं ।

भावसाम्य—तुमना कीजिए—

“प्रेम कुराये ना कुरे नैना देखि बसाय ।

( १७९ )

कहु रहीम कसे बने मनहोनी है जाय ।

मिला रहै यो ना मिला तासों कहा बसाय ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि जब कोई मनहोनी बटना बटित हो जाती है तो किसी का कार्य कैसे सिद्ध हो सकता है । कोई प्रतीष्ट वस्तु हमको प्राप्त हो प्रबन्ध न हो होने पर हमारा बन्ध नहीं बनता ।

भावसाम्य—संस्कृत की भी एक शक्ति है—

अवश्यम्भाविनो जाता अवन्ति महानामपि ।

( १८० )

कागज को सो पुतरा सहजहि में धुल जाय ।

रहिमन यह अधरज लखो सोज खेबत जाय ॥

धर्म—यह छरीर कागज के बने हुए पुतले के समान है जो धीमे ही धुल जाता है । रहीम जी कहते हैं कि एक आश्चर्य देखी कि कागज के पुतले के समान होने पर भी यह छरीर बचाव लेता है ।

भावसाम्य—तुमना कीजिए—

कीन मरोसा देह का धाँकहु बतन उपाय ।

कागज की लख लकी लखि लखे लखि लख ॥

(१८१)

कैसे निबहूँ भिखल जन करि सबसग सों बैर ।

रहिमन बसि सागर धिये करत मगर सों बैर ॥

अर्थ—निबस व्यक्ति यदि सत्किष्ठासी व्यक्ति से सभुना रहे तो कैसे निभाय हो सकता है। रहीम कबि कहते हैं कि सागर में रहकर बुध्दिग्न मगर से बैर नहीं किया जा सकता क्योंकि परिस्थान प्राकृतिक हो सकता है।

(१८२)

काम न काहूँ भाबहीं मोल रहीम न सेह ।

बाबू टूटे बाज को साहस्य चारा देख ॥

अर्थ—कबि ने इस बोधे में बताया है कि जिसका कोई नहीं होता उसका रखक ईश्वर होता है क्योंकि जब बाज का पंख टूट जाता है तो वह किसी काम का नहीं रहता। उस अवस्था में उसको कोई नहीं बरीकरता फिर भी ईश्वर ही उसको मोक्ष प्रदान करता है।

(१८३)

कुटिसन संग रहीम कबि साधू बचते नाहि ।

ज्यों नैना सेना करे उरज उमैठी साहि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि बताइए कुष्ट पुरुषों के साथ रह कर सज्जन पुरुष भी कैसे बच सकते हैं ? उन्हें भी कष्ट भागना ही पड़ता है। जैसे नैन तो तिरछी निगाह से प्रहार करते हैं और कम उरोजों को भोगना पड़ता है क्योंकि उनको प्रिय नसलकर कष्ट देता है।

भावसाम्य—इसका भावसाम्य निम्न बोधे में देखा जा सकता है—

ज्यों बहिष क्यो निबहिये नीति नेह पुर नाहि ।

जग मयी भोगना करें नाहक मन बँध जाहि ॥

(१८४)

सैंधि चकनि डीसी करनि कहहु कौन यह प्रीति ।

प्राज काल मोहन गहो, रस बिपा की रीति ॥

अर्थ—प्राज काल बीहृष्य ने कार्तिक वास में बाँध पर लटकाने वाले

( १६२ )

जो रहीम बीपक बसा, तिय राकस पट-घोड ।

समय परे से होत है बाही पट की छोट त

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि सभी बीपक को अपने घोषण की छोट में रखती है पर समय नाकर बाही घोषण पर छोट का बैठता है अर्थात् बसा देता है ।  
दुष्ट पुस्तों का भी यही स्वभाव होता है ।

भावार्थ—

जिहि घोषण बीपक दुरखो हृदयो को छाही पाठ ।

रहिमन असमय के परे, निज घबू झूँ बाठ ॥

—रहीम

( १६३ )

जो रहीम पगतर परी, रगरि नाक अथ सीस ।

निदुरा आगे रोयखो, आँसु पारिखो खीस ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि निदुर व्यक्ति के सामने अपना दुबड़ा रोना और आँसु बहाना अर्थ होता है अने ही तुम नाक रगड़ कर और तिर झुका कर उसके पैरों में चढ़ो ।

( १६४ )

तब ही लीं बीबी भसी बीखो होय न बीम ।

अग में रहिखो कुचलि मति उचित न होय रहीम ॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि बीबित रहना सभी तक प्रशस्त है जब तक बात बने की छक्ति कम न हो । संसार में अनुचित रीति से रहना ठीक नहीं ।

( १६५ )

तखवर कम नहि जात हैं सरवर विपहि न पान ।

कहि रहीम पर काम हित संपति सैबहि नुबान ॥

अर्थ—बूझ स्वयं कम नहीं जाते और खरोबर कम नहीं बीते । रहीम भी कहते हैं कि सज्जन लोग संपत्ति का संबंध से परोपकार के लिए ही करते हैं ।

भावनाम्य—संस्कृत के निम्नलोको से इस बोहे के भाव की पूर्ण समता है ।

विबन्धित अथ स्वयमेव नाम्ना-  
स्वयं न आवन्ति फलानि वृक्षा-  
पयोमुषाम्ना- स्वविबन्धित पास्प-  
परोपकाराय सती विमूढन ॥

(११९)

तैं रहीम सब कौन है एसी बीबत बाय ।

अस कायब को पुतरा नमी माहि घुस जाय ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि यह शरीर कुछ घोर कायब से बने पुतले के समान है जो नमी पावे ही बुलकर मट्ट हो जाता है लेकिन यह स्वास लेने वाला जीव प्राणिर कौन है ? समझ में नहीं आता ।

(१२०)

बोबे बाबर नबार के, ज्यों रहीम धहरात ।

धनी पुख्त निर्धन भए, करें पाखिसी बात ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि नबार मास के बासी बादल जिस प्रकार धुमकते हैं उसी प्रकार धनी धनपुख्त निर्धन होने पर अपने पिछले दिनों की ही बातें करते हैं ।

(१२१)

घोरो कियो अहेम की बड़ी बढ़ाई होय ।

ज्यों रहीम हनुमंत को, गिरधर कहत न कोय ॥

अर्थ—बोड़ा सा भी बहूपण का कार्य करने पर बड़ों की प्रशंसा हो जाती है वैसे धीकृष्ण ने तो पर्वत को केवल चारण ही किया था तो भी उनका नाम गिरिधर हो गया और हनुमान पर्वत को बहुत दूर तक उठा कर से गए फिर भी उनको कोई गिरिधर नहीं कहता ।

(१२२)

बाबुर मोर किसान मन, सम्यो रहै धन माहि ।

रहिमन चातक रटनि हू सरवर को कोउ नाहि ॥

अर्थ—मैकन खुर और किसान इन सभी का मन बादल की ओर गया



रहता है कि कब क्यों हो । बातक भी मेव का नाम रहता है । पर बातक की समानता करने वाला कोई नहीं ।

बाबताम्ब—तुमना कीबिए—

‘भुब मीठे मानस मलिन कोमल मोर बकोर ।

भुबस बबल बातक नवल रझी भुवन मणि ठोर ॥’—तुमसी

(२०)

बीरय होहा घरय के घाघर बोरे बाहि ।

र्यों रहीम नट कु डली समिटि कूबि बहि जाहि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि बोहे में अर्थ ही पर्याप्त लग्ना होता है पर अक्षर बोहे ही होते हैं जैसे पूरे आकार का नट अपने शरीर को समेट कर फिर दूब कर छोटे से गोले में से निकल जाता है ।

विशेष—(१) अनेक नट इस प्रकार का खेल दिखाया करते हैं । उनके पास एक लोहे की पत्ती घाघि का छोटा सा जल होता है । उसको कुछ ठ बाई पर बड़ा कर दिया जाता है और पूरे आकार का नट उसमें होकर दूनरी ओर दूब जाता है ।

(२) बोहे के अम्ब लामन की बात बिहारी के बारे में भी इसी प्रकार कही जाती है—

बेखान में छोटी लने जान करे गंधीन ।

(२०१)

घरसी की सी रीति है सीत घाम ओ मेह ।

अंसी परै सो सहि रहै र्यों रहीम यह बेह ॥

अर्थ—पृथ्वी की यह रीति है कि वह सर्वाँ भूप और वर्षा को भी पकटी है उसे सहन कर लेती है । रहीम भी कहते हैं कि उसी प्रकार इस प्रकार इस शरीर को भी जो कुछ कुछ कुछ धाए उसे सहन कर लेना चाहिए ।

विशेष—रहीम भी ने अम्बन भी लिखा है—

‘जैसी परे सो सहि रहे कति रहीम यह बेह ।

(२०२)

नहिं रहीम कुछ क्य गुन नहीं मृगया अनुराग ।

बेसी स्वाम को राखिये भ्रमत भूष हो नाग ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि यदि बेसी कुता पाला जाय तो बसमें न तो कोई मुन्दर रूप बनना मुझ ही होता है और न उसे बिकार करने से ही कोई नाना होता है । वह तो बस भ्रमते हुए भौंछता ही रहता है ।

(२०३)

मात नेह कुरी भसी, को रहीम बिय जानि ।

निकट मिरावर होत है क्यों गढ़ही को पानि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि इस बात को हृदय में नभी भांति समझ लेना चाहिए कि सम्बन्धियों तथा स्नेहियों से दूर पर रहना ही अच्छा है । पास रहने पर उनका बढ़ही के बल के समान ही निरावर होने लगता है ।

(२०४)

माव रीझि तन बेत मृग मर घन हेत समेत ।

ते रहीम वशु ते अधिक, रीझे कुछ न बेत ॥

अर्थ—संयमित पर मृग होकर हरिण अपना घटीर पवित्र कर देता है, मृग होकर मनुष्य अपना मन और मनस लोकावर कर देता है । वे लोग तो वशु से भी बढ़कर हैं जो रीझने पर भी कुछ नहीं बेते ।

(२०५)

निल कर किया रहीम कहि सिधि मापी के हाथ ।

पांसे अपने हाथ में बाँध न अपने हाथ ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि अपने हाथ में तो केवल कर्म करना ही होता है सिद्धि देना ईश के अधिकार है । बीपड़ यदि बैसते समझ पड़ि तो अपने हाथ में रहते हैं पर बाँध क्या बाँधना वह अपने हाथ में नहीं होता ।

बिधेय—इस दोहे में स्पष्ट रूप से गीता के ज्ञान का उपदेश दिया गया है बीधा योगवन्धीता में कहा है—

‘अभ्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।’

(२०६)

मैंम ससौने अघर मधु बहि रहोम अठि कोन ।  
मीठो भाय सौन पर अघ मीठे पर सौन ॥

अर्थ—मैंम ससौने (नामधन्युक्त नमकीन) हैं और अघर मधुर (मीठे) हैं । एहीम भी कहते हैं कि इनमें मसा कौन या कम है ? क्योंकि ममकीन के पक्कात मीठा अण्डा लगता है और मीठे के पक्कात नमकीन ।

(२०७)

पसग बैसि पतिवता रिति सम सुनो सुमान ।  
हिम एहीम बैसी बहो सत जोजन बहिमान ॥

अर्थ—है सज्जनो सुनो पान की बेल और पतिवता स्त्री इन दोनों की रिति समान होती है । पान की बेल को पाना बला होता है और दूर पर पति के बिबोध से पतिवता नाटी बल जाती है ।

(२०८)

परि रहियो भरियो मसो सहियो कठिन कसेश ।  
बामन हूँ बसि को छैन्यो मसो बिषी उपवेश ॥

अर्थ—एहीम भी कहते हैं कि दुखरे के यहाँ रहकर दुःख सहन करने से तो बसका भरना ही अच्छा है । ममभाव ने बसि को बामन का रूप धारण कर, बल करके ठीक ही उपवेश दिया ।

(२०९)

पात-पात को सोचियो बरी-बरी को लौम ।  
रहिमन ऐसी बुद्धि को कहो बरंगो कोम ॥

अर्थ—बुद्धि की उन्नति के लिए बड़ को धींचना चाहिए और बाल को बड़ बनाई जाने वाली बड़ियों को नमकीन बनाने के लिए पिछी हुई बाल नमक मिलाता चाहिए । किन्तु जो व्यक्ति बड़ के स्थान पर पत्ते को लेता है और बाल के स्थान पर प्रत्येक बड़ी से नमक मिलाता है उसकी प्रयत्नता कौन करेगा ?

( २१० )

पायस बैसि रहीम भन, कोइल साथे मीन ।  
अब बाकुर बसता मए, हमको पूछत कोन ॥

अर्थ—बर्षा ऋतु को देखकर कोयल तथा रहीम के मन में मीन साथ लिया है । अब तो मेंढक ही बोलने वाले हैं । हमारी तो कोई बात ही नहीं पूछता । अविश्राम यह है कि कुछ बचकर ऐसे घाते हैं जब बुद्धिबों को चुप रह जाना पड़ता है इनका कोई धावर नहीं करता और पुण्डरीन बाबान व्यक्तिबों का ही बोलबाबा हो जाता है ।

( २११ )

पूख्य पूजे बैबरों, तिय पूजे रघुनाथ ।  
कहि रहीम होऊन बने पड़ो बीस के साथ ॥

अर्थ—कहि रहीम कहते हैं कि पुरुष तो सूत-म तों की पूजा करते हैं और स्त्रियो भगवान् राम को पूजती हैं । पुरुषों और स्त्रियों का साथ ऐसा सपता है बीस पड़ों (बेस के बच्चों) तथा बीसों का साथ हो ।

( २१२ )

फरबी साह न है सके गति टेढ़ी तासीर ।  
रहिमन सीधे जान सों प्याबो होत बजीर ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि छतरंज के खेल में बजीर का मोहरा बार घाह नहीं बन सकता क्योंकि उसका टेढ़ा चलने का स्वभाव होता है । परन्तु सिपाही का मोहरा सीधा चलते चलते बजीर के घर में पहुँच जाता है तो बजीर बन जाता है ।

विशेष—(१) छतरंज में बजीर की जान टेढ़ी होती है । सिपाही सीधा चलता है । अब अपनी धोर का बजीर पिट जाता है और सिपाही सीधा चलते चलते दूसरी धोर के बजीर के घर में पहुँच जाता है तो बजीर बन जाता है ।

(२) यहाँ रहीम भी ने टेढ़ी जान की हानि तथा सीधी गति का लाभ बताया है ।

( २१३ )

बड़ माया को बोप यह जो कबहुँ घट जाय ।  
तो रहीम मरिचो असो कुल सहि जिए ससाय ॥  
धर्म—रहीम जी कहते हैं कि धन का यह एक बहुत बड़ा बोप है कि  
जब वह कम हो जाता है तो जीवन से मृत्यु पण्छी खटती है । कुलों को सहते  
हुए बीबित रहने में बड़ी प्रापति होती है ।

भावमात्र - 'मृच्छकटिक' नाटक का चारित्र्य भी यही कहता है—  
सुखानु सो याति नरो बहिष्ठा ।  
धुत धरीरेख मुव स बीबति ॥

( २१४ )

दुरबिन परे रहीम कहि दुरधस जयत भागि ।  
ठाढ़े ह्ममत धूर पर सब घर लागत भागि ॥  
धर्म—रहीम कब कहते हैं कि दुरे दिनी में तो किसी दुरे स्थान में  
जाकर भी प्राप्य लिया जा सकता है क्योंकि जब घर में प्राय सब बाँटी है  
तो प्राग से बचने के लिये कूड़ा घर में लाकर बचाव करना बुद्धिमानी ही  
समझी जाती है ।

( २१५ )

बड़े पेट के भरम को है रहीम कुल जाड़ि ।  
याते हाथिहि ह्मरि क बिये बाँटि हैं कांछि ॥  
धर्म—हाथी के बाहर बीजने वाले बाँटों को देखकर रहीम जी कहते हैं  
कि बड़े पेट को भरने में कुल भी होता है । इसीलिए हाथी में निहविड़ा कर  
दो बाँट निकाल दिए हैं ।  
निधन—बाँट दिखाना या 'बाँट निधोरना' बीमठा प्रदर्शन के लिए  
प्रयोग किया जाता है ।

( २१६ )

बड़त रहीम भमाक्य धम धर्म धनी के जाय ।  
घटै सक चाको कहा भील भाँग जो जाय ।  
धर्म—रहीम जी कहते हैं कि जनमानस मनुष्यों का ही जन बढ़ता है और

बनवान मनुष्यों का ही बन बटता है। जो जिस्य प्रति मान्य कर जाता है  
 जिसके पास बन है ही नहीं उसका क्या बटेगा बढ़ेगा ?

(२१७)

माघी या जनमान की पाँडव बनहि रहीम ।  
 सबहि गौरि सुन बौद्ध है बस है सभु अनीम ॥

अर्थ—राहीम भी कहते हैं कि होनहार इतनी प्रबल होती है कि उसने  
 पाण्डवों को भी बन में भेज दिया। यद्यपि महाशेख पार्वती भी के पति है फिर  
 भी पार्वती बन्ध्या ही है, ऐसा सुना जाता है।

वित्तो—बहु युधिष्ठिर हुए में अपने सम्पूर्ण राज्य को अपने चारों माइयों  
 वहाँ तक कि अपनी पत्नी द्रौपदी को भी हार गए तो उनको एक धीरे पाँचा  
 फेड़ने का प्रबसर दिया गया जिसमें छत रबी गई कि यदि युधिष्ठिर हार जाते  
 हैं तो द्रौपदी तथा चारों माइयों सहित उनको बारह वर्ष बन में रहना होगा  
 और एक एक वर्ष प्रजापत वास करना होगा। यदि वह जीत जाते हैं तो उन्हें  
 तत्काल उनका सम्पूर्ण राज्य दे दिया जायगा। किन्तु इस बीच को भी युधिष्ठिर  
 हार गए। कनकसूक्त उन्होंने बारह वर्ष बन में तथा एक वर्ष प्रजापत वास  
 में व्यतीत किए।

(२१८)

मन सों कहा रहीम प्रभु हग सों कहा बिधान ।  
 देखि हगल जो आकरें, मन तेहि हाथ बिकान ॥

अर्थ—राहीम भी कहते हैं कि मन के समान राजा धीरे नेत्रों के समान  
 मन्त्री धीरे कहा मिल सकत हैं। जिस प्रकार राजा मन्त्री की सलाह से कार्य  
 करता है उसी प्रकार नेत्र जिसको देखकर धावर होते हैं मन भी उसी के हाथ  
 बिक जाता है।

(२१९)

महि मन सर पंजर कियो रहिमन बल धबसेय ।  
 सो असुन येराठ घर रहे नारि के मेय ॥  
 अर्थ—राहीम भी कहते हैं कि जिस प्रकार बलशाली धनुर्धर में बाणधर बाण

के समय पृथ्वी धीरे धाकाध को बाएँ से दफ बिना या बड़ी मजुन को  
राधा बिराट के यहाँ स्त्री के रेश में रहना पड़ा ।

विशेष—(१) जब श्रीकृष्ण की अनुमति है धर्मि-देव साधन बन को  
बना रहा था तो इन्द्र ने उसको बुझाने के लिए वर्षा की । परन्तु धर्म ने  
बाएँ से पृथ्वी धीरे धाकाध को इस प्रकार धाकाध कर दिया कि उसमें  
से पानी प्रवेश नहीं कर सका धीरे धर्म ने अपना कार्य पूर्ण कर लिया ।

(२) जब हुए में हारने के पश्चात् पाण्डव काछ वर्ष बन में ध्वस्त कर  
हुने तो उन्होंने एक वर्ष का प्रसाध बाध का समय बिताने के लिए बिराट के  
पर रहने का निश्चय किया । युधिष्ठिर ने राधा को हुए में उहावता देने  
वाला कार्य लिया भीमसेन ने रतोदये का कर्ष बाध किया धर्म ने बृह  
सला के रूप में बिराट की कर्षा को मुख्य सिखा देने का कार्य बाध दिया ।  
एक बार इन्द्र की सभा में उर्वरी को बिराट कर देने के कारण उर्वरी से  
धर्म को एक वर्ष पुरुषत्व के पुण्य से हीन होने का क्षाप मिला था । धर्म  
ने उस क्षाप की ही धर्म से एक वर्ष के लिए मारी का रेश बाध किया  
धीरे बिराट के यहाँ रहे ।

(२२)

मान सहित विष साह के संसु भए जगदीश ।  
बिना मान धर्म पर्य, राहु कदायो सीत ॥

धर्म—सावर-भवन से निकले हुए विष को भी सम्मान सहित पी कर  
विष भी जगदीश के नाम से विख्यात हुए पर बिना सम्मान के धर्म पीने पर  
भी राहु को अपना धिर कटाना पड़ा ।

विशेष—(१) समुद्र में देवता धीरे धानवों के सम्मिश्रित प्रयास से समुद्र  
मत्ता गया । उससे जीवत रत्न निकले । उनमें से विष भी था । विष से बारा  
संसार बनने गया । तब देवता की प्रार्थना पर मयवान विष ने अपघ के  
कर्मसाध के लिए विष को पीकर कण्ठ में बाध कर लिया । धर्म वह  
जगदीश कहलाए ।

(२) जब धर्म के लिए देव-दानव धर्म करने लगे तो जगदान विष के  
सोहिनी का रेश बाध कर देवता धीरे धानवों को

को पहले प्रभुत मिलाया । यह देवता का रूप धारण करके देवताओं की पति में सा मिला । वा । सूर्य तथा चन्द्रमा ने जो अमल अमल में वे पुनर्जी की तो किष्णु ने बल से यह का तिर काट दिया । प्रभुत जी लेने से वह धमर हो चुका था । अतः अब यह तथा तिर केतु कहलाया ।

(२२१)

यह रहीम निज संग जी जगमगत जगत न कोष ।

बीर, प्रीत अम्बास अस होत होत ही होम ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब ता प्रेम अम्बास धीरे कीर्ति इनको साथ लेकर कोई प्राणी संसार में उत्पन्न नहीं होता । ये सब तो बीरे बीरे ही होते हैं ।

(२२२)

रहिमन असमय के परे, हित अनहित हूँ जाय ।

अधिक बड़े मूय जान सों बधिर बेल बनाय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बुरा समय जाने पर हितकर वस्तु भी अहितकर हो जाती है । जैसे बेहिसिया बाण से हरिण को मारता है, ता उसके के जान जाने पर बाव से बहने वाले हरिण के स्वर्ग के रत्न से हरिण का स्वर्ग पदा लव जाता है ।

(२२३)

रहिमन घाटा के जगे बाबत है दिन राति ।

धिर शककर के जात है; तिनको कहा बिसात ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जब मूल पर घाटा मने जाने पर निर्बल मूख या डोलक रात-दिन बबती रहती है तथा जी धीरे शककर जाने जाने मनुष्य की तो बात ही क्या है । उसको तो बिलाने जाने की प्रशंसा करनी ही पड़ती है ।

(२२४)

रहिमन कुटिल कुठार क्यों, करि डारत हूँ ठूक ।

असुरग के कसकत रहूँ समय बूक की ठूक ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं जिस प्रकार फोड़ कुहाड़ी शकरी के हो ठूकने



कर डालती है उसी प्रकार व्यवसर निकल जाने का पड़ता है। बहुत मनुष्यों के हृदय को कष्ट देता रहता है।

(२२३)

रहिमन चुप छ' बीठिये बेसि हिमनि को केर।  
जब नीके दिन आइ हैं जमति न समि है बेर ॥

धर्म—रहीम भी कहते हैं कि बुरे दिनों का बचकर धाने पर चुप होकर बैठ रहना चाहिए क्योंकि जब अच्छे दिन आएँगे तो बियड़े काम बनने देंगे नहीं मनेवी।

(२२४)

रहिमन जग जीवन बड़े काहू न बेखे मैन।  
बाय बसानम प्राप्त हो कपि लागे गय सेन ॥

धर्म—रहीम भी कहते हैं कि इस संसार में किसी व्यक्ति ने अपने ही जीवन में बड़प्पन प्राप्त नहीं किया। जैसे राजसू के भीते भी बम्बरों ने उसकी सम्पत्ति (लंका) को लूट लिया।

(२२५)

रहिमन जाके बाप को पानी पिघत न कोय।  
ताकी गेल प्रकास लौ क्यों न जालिमा होय ॥

धर्म—समुद्र के ऊपर उठते हुए काले-काले बादलों को देखकर रहीमजी कहते हैं—बादल का पिता समुद्र है। समुद्र का कोई पानी भी नहीं पीता वह जला बादल का मार्ग भी धाकाऊ तक कासा क्यों नहीं हो जायगा। जिस व्यक्ति के पिता का कोप विरक्तकार करते हैं बिछके यहाँ का पानी भी नहीं पीते उस व्यक्ति का मार्ग (जीवन) तो धम्बकारपूर्ण हो ही जाता है।

(२२६)

रहिमन छठरी घुरि की रही पवन ते घुरि।  
गाँठ पुलि की सुनि गई रही घुरि की घुरि ॥

धर्म—रहीम भी कहते हैं कि यह घरीर घूमि की मठरी के समान है। घमे हुवा घरी हुई है। जब ईश्वर द्वारा बांधी हुई प्राण की गाँठ लकड़ी की

मह पुन बून के कर में पड़ी रह जाती है । प्राणहीन हो जाने के अधिक नहीं रहा ।

( २२९ )

रहिमन तीन प्रकार से हित-अनहित पहिचानि ।

परबस परे परोस बस परे मामिसा जानि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि हमारे हित अन्तर्कों और अहित अन्तर्कों पहिचान तीन अवस्थाओं में होती है—दुखों के बस में पड़ जाने पर, हम में अपने पर और कोई काम पड़ने पर (अथवा मुकदमा आदि लगने) । इन तीन अवस्थाओं में हमारे अपने हितकारी ही माय सहायक हैं ।

( २३ )

रहिमन बोरे बिननि को कौन कर मुख स्याह ।

महीं छनन को पर लिया महीं करन को क्याह ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि यह जीवन बोरे दिन का घोर है । इन पाँके (नौ) के लिए सकेस बातों में बिबाह आदि लगाकर कौन मुह कासा करे, न न तो किसी दुखे को क्की को छनना ही है और न सब अपना बिबाह करना है । पर क्की को अपने के लिए अपना बिबाह करने के लिए ही लोगों का कासा होना आवश्यक होता है ।

( २३१ )

रहिमन बानि बरिखतर, लऊ जाँचिबे लोग ।

क्यों सरितन सूसा पर कुभा जनावत सोय ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि बानी बाहे बहुत बरिख ही क्यों न हो सबसे मानना जरूरत ही होता है । जैसे यद्यपि मरी घोर कुभा लोगों ही बल का बान करे हैं मरी बड़ी होती है और कू या छोटा होता है फिर भी मरी के सूख जाने पर लोग कुभा कुबवाते हैं ।

( २३२ )

रहिमन पर-अपकार के करते न मारी बीछ ।

माँस बियो सिवि सुप ने, बीछो होक बचीचि ॥

पर्य—एहीन भी कहते हैं कि परोपकारी व्यक्ति घर-उपकार करते समय मोह माया नहीं करता । चाचा शिवि ने परोपकार के लिए अपने ही शरीर का मोल दे दिया था और यहाँ पर शची ने देवताओं के उपकार के लिए अपने शरीर के इन्द्रियों तक दे दी थी ।

विशेष—(१) जब चाचा शिवि नामने व्रत कर चुके तो इन्द्र अपने शत्रु सन के लिए तय्यक हो उठा । धर्मि ने कबूतर उठा इन्द्र ने वाज का कर्ण चारल किया और शिवि के माँहों गए । भयभीत था कबूतर शिवि की ओर में था फिर । वाज ने अपने प्रसन्न को नीटाने का छावड़ किया । चाचा ने कबूतर के बराबर अपना मोल देने का निश्चय किया और अपना हाँठ काट-काट कर तराजू पर बढ़ाने लगे । कर्ण चूने पर तुला पर स्वर्य बढ़ गए और जब अपना छिर काटकर देने लगे तभी अचानक प्रकट हुए और उन्होंने शिव को अपना नाम दे दिया ।

(२) जब वृषामुर को देवता लोग किसी प्रकार नहीं जीत सके तो विष्णु ने उम्होंने घर प्राप्त किया कि शची की इन्द्रियों से बने वज्र से वृषामुर को मार का लक्ष्य । सब शची ने अपने शरीर की इन्द्रियों सहर्ष देवताओं को दे दी । उनके बने वज्र से वृषामुर को मारा का उका ।

(२३३)

रहिमन बहुत मीचन करत व्याधि न छाईत साथ ।

काय भूम बसत अरोप जन हरि अनाथ को साथ ॥

पर्य—एहीन भी कहते हैं कि ईश्वर तो भक्तियों के स्वामी हैं अनुपम तो अनेक प्रकार की विपत्ति करत हैं फिर भी रोम उलका साथ नहीं छोड़ते परन्तु जब वे पक्षु और पक्षी बीरोह बन कर निवास करते हैं ।

(२३४)

रहिमन बात अगम्य की, कहति सुमति को नाहि ।

के जानति ते कहति नाहि कहत ते जानति नाहि ॥

पर्य—एहीन कहते हैं कि अगम्य बात की बात न तो कही जा सकती है और न सुनी जा सकती है । जो लोग उसको जानते हैं वे उसका बखान नहीं करते और जो उसकी कथा करते हैं वे उसको जानते नहीं ।

(२३१)

रहिमन बिगरी प्राणि की बने न करये नाम ।  
हरि बाड़े प्राकाश सौ तऊ बावने नाम ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जो बात धारम्य में बिगड़ जाती है, वह फिर बन न्यय करके भी नहीं बन सकती । राजा बलि को खाने के लिए बानन का रस बारण करने वाले भववान यद्यपि जल के समान प्राकाश तक नष्ट हुए तथापि उनको बावन के नाम से ही पुकारा जाता है ।

विशेष—जब राजा बलि घनेक पड़ कर चुके तो इन्द्र विस्मित हुआ । भववान विष्णु उसकी विन्ता दूर करने के लिए बीने सँघासी के बेस में बलि के समीप गए और तीन वीर पृथ्वी लीवी । बलि के बेस के लिए उत्तर होने पर उन्होंने अपना आकार बहुत बड़ा लिया । उन्होंने एक वीर से पृथ्वी और दूसरे से प्राकाश नाप लिया । तीसरे वीर में बलि के शरीर को नाप कर उसे पाताल का राजा बना दिया । इन प्रकार विद्याम आकार बारण कर लेने पर भी 'बावन' नाम से ही प्रसिद्ध हुए ।

(२३२)

रहिमन भिजक के लिए कास जाति को जात ।  
बड़े-बड़े समरस भये ती न कोऊ मरि जात ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि यदि चिकित्सा करने से ही मृत्यु पर विजय प्राप्त की जा सकती हो तो जो बड़े बड़े समर्थ व्यक्ति हुए हैं वे तो नहीं मर सकते वे फिर क्यों मर गये ।

(२३३)

रहिमन यह तन सूप है लोख जगत पखोर ।  
हस्तुमन को उड़ि जान दे मखे राखि बटोर ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि मानव शरीर सूप के समान है । इससे संसार अभी उठक कर बैस लेना चाहिए । जिस प्रकार सूप बूझा यदि हमनी वस्तुओं को छोड़ देता है और मात्र प्राणि भावी वस्तुओं को रख लेता है

उसी प्रकार मनुष्य को भी सघार में सघार बातों को छोड़ देना चाहिए ।  
 सत्य की बातों का संग्रह कर लेना चाहिए ।

( १३८ )

रहिमन यों सुख होत है बड़त बेसि निज गीत ।  
 क्यों बड़री घँसियाँ मिरसि घाँपन को सुख होत ॥

पर्य—रहीम जी कहते हैं कि जिस प्रकार बड़ी बड़ी घँसियों को बेत कर घाँपों को सुख का अनुभव होता है उसी प्रकार अपने योग को बढ़ते हुए देख कर मनुष्य को सुख प्रतीत होता है ।

( १३९ )

रहिमन रजनी ही भसी पिय सों होय मिलाप ।  
 सरो बिसस किहि काम को रहिबों धापुरहि धाप न

पर्य—रहीम जी कहते हैं राजि ही अच्छी होती है जिसमें अपने मि मिलन होता है । यह दिन किम काम का जिसमें अपने धाप को रहना पड़ता है ।

( १४० )

रहिमन रहिसा की भसी जो परसी बित साय ।  
 परसत सम मैला कर सो मैला जरि लाय ॥

पर्य—रहीम जी कहते हैं यदि बने की रोटी भी प्रसन्न बित होकर हो तो वह अच्छी किन्तु मैला की बनी हुई वस्तु जिसको देते समय बित बुझी तो किसी प्रकार भी अच्छी नहीं । उसको तो धाग सम जाम तो अच्छा ।

( १४१ )

रहिमन राज सराहिये सति सम सुखद जो होय ।  
 कहा बापुरो भागु है सप्यो तरैयन कोय ॥

पर्य—रहीम जी कहते हैं कि उस राज्य की ही प्रशंसा करनी चाहिए जो सति सम के समान सुखदायक हो । उस बेचारे सूर्य का क्या कहना जो सप्यो को समाप्त कर के एकाकी ही तपता है ।  
 पर्य—कहा जाता है कि इस बोहे की रचना रहीम जी ने उस समय ही की थी जिसके लिए भाइयों का नम किया था ।

(२४२)

रहिमन रिसि को छाड़ि के, करी गरीबी भैस ।  
मीठा बोलो मे असो सब तुम्हारी बेस ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जोब को त्याग कर गरीब व्यक्तियों के समान व्यवहार करो । सबसे मजबूर बाणी से बोलो । विनम्र होकर असो सब तो सभी त्याग तुम्हारे अपने हो जाएंगे ।

(२४३)

रहिमन रिसि सहि तजत नहि बड़े प्रीति की पौरि ।  
मुकनि मारति घाघई नीह बिचारी पौरि ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं बड़े मोम जोब को सह भैते हैं और प्रेम की मयादा को नहीं छोड़ते । जब पैर बराने के बहाने पैरों पर मुक्के मारे जाते हैं तब भी बेचारी नीह होड़ कर घा ही जाती है ।

( २४४ )

रहिमन रीसि सराहिये ओ छट गुन सम होय ।  
भोति आप पे कारि के सबे पियाबी तोय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि उस व्यवहार की सराहना की जानी चाहिए जो बड़े धीर रस्सी के व्यवहार के समान हो । बड़ा धीर रस्सी स्वयं जोखिम उठा कर दूसरों की बल पिलाते हैं । जब बड़ा कुए में जाता है तो रस्सी के टूटने धीर बड़े के फूटने का डर तो रहता ही है ।

(२४५)

रहिमन बिस अयम को जरत न भागी वार ।  
भोरी करि होरी रबी, भई तमिक में छार ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि अयम का वन समाप्त होते (जबते) देर नहीं समटी । भोरी करके वस्तुएँ होनी में शान देते हैं नर छोड़ी ही देर में सब कछ बल कर पछ हो जाता है ।

(२४६)

रहिमन बिद्या बुझि नहीं, नहीं धरम अस बान ।

सु पर जनम सुमा धरे पसु बिनु पूछ बिषाम ॥

धर्म—रहीम कहते हैं कि बिनाके पास न तो विद्या है न बुझि है बिन्होंने न तो धर्म किया है न बस धर्मित किया है और न बान दिया है उनका पृथ्वी पर जन्म जेना स्वर्ण है । वे लोग तो बिना पूछ और सीप के पशु हैं ।

(२४७)

रहिमन बिपदा हू भली ओ बोरे दिन होय ।

हित अनहित या अवतल में जानि परत सब कोय ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि यदि आपसि कुछ समय की हो तो वह आपसि भी अच्छी है, क्योंकि आपसि में ही सब के विषय में जाना जा सकत है कि सत्कार में कीज हित है और कीज अहितकारी है ।

(२४८)

रहिमन जे नर नर चुके के कहुँ माँगन जाहि ।

विन से पहिले के मरे, जिन्ह मुस निकसत नाहि ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि माँगना बुरा है किन्तु माँगने वाले को कुछ न देना उचित भी बुरा है । जो मनुष्य किसी से माँगने जाते हैं वे तो मृतक के समान हैं किन्तु जो बाचक को कुछ भी देने से साफ मना कर देते हैं उनको बतते भी पहले मरा हुआ समझना चाहिए ।

(२४९)

रहिमन सुधि सबसे भली, लगी ओ वारंवार ।

बिछुरे मानुष फिर मिलै यहै नाम अवतार ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि स्मृति यदि बार बार आती है तो वह सबसे अच्छी वस्तु है । बिछुरे हुए मनुष्य पुनः मिलते हैं तो इस निमित्त को ही अवतार समझना चाहिए ।

(२१०)

राम न जाते हरिज सम सीय न राखन साथ ।

जो रहीम माबी करताई, छोड़ भापने हाथ ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि यदि होनहार अपने ही हाथ में होती तो न तो राम स्वयं मृग के पीछे जाते और फलतः न सीता ही रामस्य के साथ संका जाती । तब राम रामस्य का कुछ भी नहीं होता ।

(२११)

रीति प्रीति सबसों भली बँदब हित मित मोत ।

रहिमन याही जलम की बहुरि न संपति होत ॥

अर्थ—कवि रहीम करते हैं कि सबसे प्रेम का व्यवहार ही अच्छा है बहुत हीतरफ नही । इस जगत् की मित्रता और संबंध तो इसी जगत् में रहते हैं अपने जगत् में पुनः इन मित्रों और संबंधियों से मिलन नहीं हो पाता ।

(२१२)

क्य कया पर जात पट, कंजल बोहा लाल ।

क्यों-क्यों निरसति सूखन गति मोत रहीम बिसाल ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि क्या कहा पर सुन्दर वस्त्र लोना बोहा और पाछिपद—इसको जिसकी सूखन इष्टि से देखते हैं उसकी ही इनका भूख बढ़ता जाता है । अन्तिमार्थ है कि इन सबका वास्तविक भूख सूखन इष्टि से देखने पर ही जात होता है, बढ़ती निगाह से देखने पर नहीं ।

(२१३)

लिखी रहीम लिखार में गईं ज्ञान की ज्ञान ।

पर कर काठि बमारसी, पहुँचि मगस-स्थान ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि जब मार्ग में लिखा होता है तो कुछ का कुछ हो जाता है जैसे बमारस का रहने वाला हाथ पर काट लेने पर भी मृत्यु के समय मगहर पहुँच गया था ।

विशेष—ऐसा कहा जाता है कि काशी में मृत्यु पर पुष्टि होती और मगहर में मरने से नहीं । 'मरुमान' में इन आशय की एक कथा है कि एक



मनुष्य काशीवास करने लगा और उसने अपने पैर हाथ इत्यादि काट नि-  
जितसे घण्ट समय वह काशी से बाहर न जा सके । पर दुर्भाग्य  
एक बड़ा उसको भयहृत् ने पया और वही उसको मृत्यु हुई । बोहे में  
घोर संकेत है ।

( २५४ )

यह रहीम कामन असो वास करिय फल भोग ।

बंशु-मध्य धन होन हूँ बसिबो उचित न योग ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि बंशु आम्बों के बीच में निर्वन हो  
रहना उचित नहीं है । इससे तो नन में निवास करना और फलों को नोच  
करना अधिक अच्छा है ।

( २५५ )

ये रहीम नर धर्म हैं पर उपकारी संग ।

मौतन नारे को नारी, क्यों मेहरी को रप ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि यह मनुष्य धर्म है बिनका शरीर दूसरों के  
उपकार में लगा रहता है । जिस प्रकार मेहरी बाँटे वाले के शरीर में भी मेहरी  
का रप सम जाता है वही प्रकार परोपकारी का शरीर भी कुबोचित होता है ।

( २५६ )

सबे नहाने लसकारी, सब लसकर कहें जाय ।

रहिमन सेहू कोई सहे सीई जगीर साय ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जैसे तो सभी सैनिक सैनिक नाम से  
पुकारे जाते हैं वीर सभी फौज में भी जाते हैं, वर भी भातों की चीट सह  
करता है वही को जगीर पुस्तकार में मिलती है ।

( २५७ )

समय परे छोड़े जजन, सबके सहे रहीम ।

सभा कुसासन पर सहे गवा लिए रहे भीम ॥

अर्थ—रहीम जी कहते हैं कि जबसर घाने पर दूसरों की कुछ बातों को  
भी सह लेना चाहिए । कुबोवन की घना में कुसासन के शोषरी के वरम को  
अपेहपल किया किन्तु बसमासी भीम अपनी बचा लिए चुपचाप बैठे रहे ।

मिसेय—जब बुधिधर हुए में अपने सारे राज्य को चारों भाइयों और  
 शोषरी को हार गए तब बुर्बोवन को कुटिलता सूझी। बुर्बोवन के आदेश से  
 बुद्धासन शोषरी को बान पकड़ कर सम्राट में बसीट लाया और उसको मर्मा  
 करने के लिए उसका बदन सीकने लगा। पाँचों पाण्डव बीठे रहे। भीम  
 सब में अधिक बलशाली था फिर भी हुए में हारा होने से कुछ न कर सका।  
 उसे क्रोध पीकर रह जाना पड़ा। तब भगवान् कृष्ण ने शोषरी का पीर बढ़ा  
 कर उसकी जान रखी।

(२३८)

समय पाय फल होत है समय पाइ भरि जात ।

सदा रहे नहि एक सी का रहीम पछिलात ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि उपयुक्त समय जाने पर ब्रह्म में फल समता  
 है और बढ़ने का प्रयत्न जाने पर भ्रष्ट जाता है। सदा किसी की प्रवृत्ति  
 एक सी नहीं रहती इसलिए दुःख के समय पछताना व्यर्थ है।

(२३९)

समय साम सम साध नहि, समय कृति सम ब्रह्म ।

चतुरस्र चित रहिमान सगी समय पूक की हूक ॥

अर्थ—उपयुक्त प्रयत्न का लाभ उठाने के समान कोई साम नहीं है  
 और उपयुक्त प्रयत्न को जो देने के समान कोई गवती नहीं है। रहीम भी  
 कहते हैं चतुर सोमों के हृदय में उपयुक्त प्रयत्न के निरुद्ध जाने पर उसका  
 पछताना बना ही रहता है।

(२४०)

सरवर के लग एक से, बाहुत प्रीति न भीम ।

पै मरान को मानसर एके ठौर रहीम ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि जलाशय पर रहन वाले पक्षी सब समान होते  
 हैं। उनका प्रेम न तो बढ़ता है और न घटता है परन्तु इस का निवाह स्थान  
 तो केवल मानसरोवर ही होता है। अर्थ पक्षी तो विभिन्न जलाशयों पर जाते  
 हैं पर हंस का प्रेम एक मात्र मानसरोवर से होता है।

(१११)

स्वारस्य रसत रहीम सब, यी गुनहु जग माहि ।

बड़े बड़े बँटें सजो, पय रस कूबर छाहि ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं कि संसार में सब लोग धनधन्यों से भी स्वार्थ सिद्धि कर लेते हैं। मार्ग में रस के कूबर की छाया में बड़े बड़े लोग बैठे दिखाई देते हैं। प्रायः रूप से बचने के लिए मार्ग में बड़े हुए रस के उस नाम के नीचे लोग बैठ जाते हैं जहाँ हुमा बाँधा जाता है।

(११२)

स्वासह सुरिय जो उज्जरै सिय है निहचल चित्त ।

पूत परा घर जानिये रहिमान तीन पक्षित ॥

अर्थ—मोक्ष की अवस्था देने वाले 'सोई' की ध्वनि का सम्भारण करने स्वास स्थिर चित्त वाली स्त्री तथा घर में सपूत बेटा है तीनों पक्षि होते हैं।

(११३)

साधु सराहै साधुता बली जोसिता जान ।

रहिमान साँबि सूर को बेरी करै बसान ॥

अर्थ—रहीम कहते हैं—इस बात को समझ लो कि सम्मान पुरुष सम्मानता की प्रशंसा करता है बली मोक्षपथ की प्रशंसा करता है और सम्ने वीर के सौरे की प्रशंसा उनका बहुत भी करता है।

(११४)

संपत्ति मरम पेबाइक हाय रहत कछु नाहि ।

क्यों रहीम ससि रहत है, बिबस भकासहि माहि ॥

अर्थ—रहीम भी कहते हैं कि बिबस प्रकार बिल में जन्त्रमा घामाहीन हो जाता है उसी प्रकार कोई व्यक्ति किसी व्यसन में पड़ कर अपना मन गँवा बैठे है और वे निष्पन्न हो जाते हैं।

(११५)

ससि की ओतल बाहिनी, सुबर सबहि सहाय ।

समे ओर चित्त में लटी, धटि रहीम मन आय ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि बन्धमा की सीतल चाँदनी सुन्दर होती है और सभी को खिन्नकर लावती है परन्तु चोर के चित्त को बह दुरी लगती है और उसके मन में दुरी भावनाएँ आती हैं ।

( २६९ ) ✓

ससि, सकोच साहस, सलिल, माम समेह रहीम ।

बहुत बहुत बड़ि जात है, घटति घटति घटि सीम ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि बन्धमा सकोच साहस जल (गरी प्रादि का) सम्मान और श्रेय ये सब बहुत बढ़ते बहुत बढ़ जाते हैं । पर जब ये घटते हैं तो घटते घटते सीमा तक पहुँच जाते हैं—शुष्क हो जाते हैं ।

( २७० )

होत कृपा को बड़ेन को, सो कयापि घटि जाय ।

सो रहीम मरिबो भलो यह दुख सहो न जाय ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि बड़े लोगों की जो कृपा हम पर होती है यदि वह कम हो जाय तो इस दुःख को सहने की अपेक्षा मर जाना अधिक अच्छा है क्योंकि यह दुःख सहना नहीं जा सकता है ।

( २७१ )

घोड़े को सतसँग रहिमन तबहुँ अंगार क्यों ।

तातो जारि अंग सीरे ये कारी लगै ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि कुछ मनुष्य का साथ धरार के साथ समान होता है अथः उसको छोड़ देना चाहिए । अंगार जब तक गरम रहता है, जब तक घटिर को जलाता है और जब ठंडा हो जाता है तो घटिर को जला कर देता है इस तरह दोनों ही अवस्थाओं में उससे हानि होती है ।

( २७२ )

रहिमन जग की रीति में देख्यो रस ऊस में ।

ताहूँ में परतोति जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं ॥

धर्म—रहीम जी कहते हैं कि जहाँ नर गाँठ (मनोभासिय) होती है वहाँ

रस (मेम) नहीं रहता है। यही संसार की रीति है। मेने ईक (मम) में रस पर बहो भी बहो निस्बास हो गया कि वाँठ में रस नहीं होता।  
(२७०)

रहिमन नीर पसान, बूक से सोझ नहीं।  
तैसे मूरख जान, बूझ से सुझ नहीं।  
धर्म—रहीम भी कहते हैं कि जिस प्रकार जल पड़ा होने पर भी पत्थर मरम नहीं होता उसी प्रकार मूल ब्यक्ति की व्यवस्था होती है। जान बिजाने पर भी मूल की समझ में कुछ नहीं आता।  
भावसाम्य—मूरख हुबन न बेठ जो पुष मिलहि बिरधि सम।  
(२७१)

रहिमन बहुरा बाज गगन बड़े फिर क्यों तिरै।  
वेठ अथम के काज केर धाय बचन परै।  
धर्म—रहीम भी कहते हैं कि वेठ के लिए ब्यक्ति को क्या नहीं करना पड़ता ? बाज जब एक बार मुक्त होकर आकाश में बढ़ जाता है (पनिषो के सिकार के लिए) तो फिर वह पृथ्वी पर क्यों उतरे ? किन्तु नीच वेठ को मरने के लिए वह पुनः ठिकारी के पाठ आकर बन्धन में पड़ जाता है।  
(२७२)

रहिमन मोहि न सुहाय अमी पिमावे मान बिनु।  
बह बिप देय बुलाय मान सहित मरिबो भसी।  
धर्म—रहीम भी कहते हैं कि यदि मुझको कोई सम्मान के बिना समूह में पिलाये तो मुझे धन्य नहीं लगेगा और यदि कोई सम्मानपूर्वक बुलाकर बहर भी मेरे धन्य है क्योंकि सम्मानहीन जीवन से सम्मान सम्मान सहित मृत्यु भली।  
(२७३)

माह मास सहि टेसुघा मीन परे बस घोर।  
रही रहीम अज जानिए, फुटे धायुने छोर।  
धर्म—मास मास जाने पर टेसू का बूझ और पृथ्वी पर बढ़ने पर धर्महीन

की बसा बसत जाती है उसी प्रकार सघार में अपने स्वाम के छूट जाने पर सघार की अन्य वस्तुओं की बसा होती है। जिस प्रकार मक्खनी बस से पृथ्वी पर या जाने पर घर जाती है उसी प्रकार अन्य वस्तुओं की हालत होती है।

(२७४)

जाँकी बितवन बित गयी सुधी तो कलु भीम।

गाँसी से बड़ि होत कुस, काकि न सकत रहीम ॥

धर्म—कवि रहीम कहते हैं कि टेढ़ापन बड़ा दुःखदायी होता है। टेढ़ी बितवन हृदय में गड़ जाती है, सीधी उठनी नहीं गड़ती। टेढ़ी बात (बुझने वाली बात) से हृदय को बड़ा दुःख होता है। और जब टेढ़ी बितवन घबरा फुटिस बात मन में घुम जाती है तो निकासने पर भी नहीं निकल पाती।

(२७५)

घाबर घटे नरेस दिन बसे रहे कसु नाहि।

ज्यो रहीम कोहिन मिले बिक जीबन जय माहि ॥

धर्म—नरेस के पास में जाने से घाबर बटता है वैसे पास में बसे रहो तो दुःख नहीं है। लेकिन अनेक बार मिल कर अपना अपना करना तो निश्चय बिकार के योग्य है।

(२७६)

रहिमन चाक कुम्हार को भणि दिया न बेइ।

छेइ में डडा डारि के यहै नाँव ले लेइ ॥

धर्म—रहीम कवि कहते हैं कि कुम्हार को चाक अनुभव से माँवने पर बीपक भी बनाकर नहीं देता लेकिन जब कुम्हार चाक के छेइ में अपना बड़ा डालकर घुमाता है तो बीपक तो छोटी सी चीज है—बहु बड़ी नाँव (मिट्टी का बड़ा पात्र) तक बनाकर दे देता है। आचार्य यह है कि सीधी तरह माँवने पर कोई भी छोटी सी चीज तक देने की तैयार नहीं होता और और खरान करने पर मजबूरी जब बड़ी-बड़ी चीजें तक दे देनी पड़ती हैं।

श्लोक—“छेइ में डंडा डारि के”

यै धर्म प्रसीसता का भी छोटक है यहाँ यहाँ प्रसीसतत्व होय या गया है।

(२७७)

यह रहीम निज संग से जनमत जगत म कोय ।  
 बेर प्रीति प्रम्यास जस होत होत की होय ॥

सर्व—कविवर रहीम कहते हैं कि शत्रुता प्रीति प्रम्यास घोर यद्यपि इनको कोई भी व्यक्ति जन्म से जगत में प्राप्त नहीं जाता यद्यपि घीरे-घीरे ही ये चीजें प्राप्त होती हैं। जैसे घीरे-घीरे बुझि पाकर ही शत्रुता घोर प्रेम होता है। प्रम्यास घोर यद्यपि एकदम प्राप्त नहीं होता यद्यपि इसके भिन्ने भी कुछ समय की अपेक्षा होती है।

(२७८)

ये रहीम फीके डुबो, जानि महा सतापु ।  
 क्यों तिय कुछ आपम गहे आप बड़ाई आप ॥

सर्व—स्पष्ट नहीं है।

(२७९)

रहिमन कठिन चित्तान ते चित्त को चित बेत ।  
 चित्त बहुति निर्बीज को, चित्त जीब समेत ॥

सर्व—कविवर रहीम कहते हैं कि चित्त से अधिक कष्टप्रद चित्ता होती है जो चित्त को दग्ध करती रहती है। चित्त निर्बीज (सब) को ही बनाती है लेकिन चित्ता को सबेह (चिन्ता) मनुष्य को ही बनाती रहती है।

भावसाम्य—चित्ता चित्ता समाख्याता विन्मुमान विशेषतः ।  
 चित्ता बहुति निर्बीज चित्ता बहुति सबीजन ॥

(२८०)

रूप विलोकि रहीम तहें जहें जहें मन सगि जाय ।  
 पाके ताकहि आप बहु, सेत छोड़ाय छोड़ाय ॥

सर्व—रूप की देखकर जहाँ जहाँ मन लग जाता है वहाँ मन को हटाने की बार-बार कोशिश की जाती है लेकिन मन देखते-देखते चकटा नहीं है।

( १८१ )

रहिमन का डर निसि परे ता बिन डर कर सोय ।  
पस-पस कर ते लागते बिसु कहीं यो होय ॥  
अर्थ—सस्पष्ट है ।

( १८२ )

बाहू गई बिम्बा मिटी मनुषा बेपरबाह ।  
बिनको कसु न चाहिये, वे साहन के नाह ॥

अर्थ—किसी प्रकार की इच्छा न होने पर बिम्बा भी समाप्त हो गई फलतः मन अब बेपरबाह हो गया । किसी वस्तु की बाहू होने पर ही उसको प्राप्त करने के लिये बिम्बा उत्पन्न होती है और बिम्बा ही मनुष्य की सम्बन्धों में बाँध रखती है अतः बिम्बा के समाप्त होने पर मनुष्य भी बेफिक्र हो जाता है । और बिना मनुष्य को किसी वस्तु की कामना नहीं रहती वह ईश्वर के ध्यान में मग्न हो जाता है ।

( १८३ )

बिम्बा बुद्धि परेकिय, टोटे परख जियाहि ।  
सगे कुबैसा परेकिय, ठाकुर मुनो कि आहि ॥

अर्थ—बिम्बा के समय बुद्धि की परख की जा सकती है क्योंकि बिम्बा इस व्यक्ति को बुद्धि द्वारा ही मार्ग-दर्शन मिलता है । मन के बाटे के वक्त स्त्री की परख होती है क्योंकि यमाश्रम में भी स्त्री साथ रहे तो उसका प्रेम बरका सम्पन्न चाहिये । बुरे समय में सखे-सम्बन्धियों की परख होती है और ठाकुर की परख कर्म से होती है ।

( १८४ )

सासों ही कसु पाइये कीबे जाती आस ।  
रीते सरबार पर घए कैसे कुबे पियास ॥

अर्थ—जिससे कुछ प्राप्ति हो सके उससे किसी वस्तु की याचना करना उचित है क्योंकि पानी से रिक्त तालाब से प्यास की पूर्ति करना व्यर्थ ही होगा ।



(१७७)

यह रहीम निज सँग सै, बनमत जगत न कोय ।

बीर, प्रीति धर्म्यास अस होत होत की होय ॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि यद्युक्त प्रीति धर्म्यास और यद्यपि इनकी कोई भी व्यक्ति धर्म से बहुत में काम नहीं जाता अपितु बीरे-बीरे ही से बीरों प्राप्त होती है । जैसे बीरे-बीर कुछ पाकर ही यद्युक्त और प्रेम होता है । धर्म्यास और यद्यपि भी एकदम प्राप्त नहीं होता अपितु इसके लिये भी कुछ समय की अपेक्षा होती है ।

(१७८)

ये रहीम धीके धुबो जानि महा सतायु ।

क्यों तिय कुछ प्रापन गछे प्राय अड़ाई प्राय ॥

अर्थ—स्वप्न नहीं है ।

(१७९)

रहिमन कठिन चित्तम से चित्त को चित्त देत ।

चिता बहति निर्बीज को, चिता जीव समेत ॥

अर्थ—कविवर रहीम कहते हैं कि चित्त से अधिक कठिन चित्त होती है जो चित्त को दान करती रहती है । चित्त निर्बीज (धन) को ही बनाती है लेकिन चित्त को बरेह (चिन्ता) मनुष्य को ही बनाती रहती है ।

भावनात्म्य—चित्त चित्त समाख्याता विमुक्त विवेक ।

चित्त बहति निर्बीज चित्त बहति जीवसमेत ॥

(१८०)

अप विस्तोकि रहीम तहें जहें जहें मन ननि जाय ।

पाके ताकहि प्राय बहु, सेत छोड़ाय छोड़ाय ॥

अर्थ—अप की देखकर जहाँ जहाँ मन नन जाता है वहाँ मन को हटाने की बार-बार काबिज की जाती है लेकिन मन देखते-देखते चम्पटा नहीं है ।

(२८१)

रहिमन का डर निसि पर ता दिन उर कर सोय ।  
 पस-पस कर ते सागते बेसु कहाँ यो होय ॥  
 अर्थ—अस्पष्ट है ।

(२८२)

बाहू यह बिम्बा मिटी मनुष्य केपरबाह ।  
 जिनको कछु न चाहिए, वे साहज के नाह ॥

अर्थ—किसी प्रकार की इच्छा न होने पर बिम्बा भी समाप्त हो गई फलतः वह बाहू केपरबाह हो गया । किसी वस्तु की चाह होने पर ही उसको प्राप्त करने के लिये बिम्बा उत्पन्न होती है और बिम्बा ही मनुष्य को समझनों में डाले रखती है अतः बिम्बा के समाप्त होने पर मनुष्य भी बेफिक्र हो जाता है । और जिस मनुष्य को किसी वस्तु की कामना नहीं रहती वह ईश्वर के ज्ञान में विलीन हो जाता है ।

(२८३)

बिम्बा बुद्धि परेनिए, टोटे परख जियाहि ।  
 सगे कुबेला परेनिए, ठाकुर गुनो कि धाहि ॥

अर्थ—बिम्बा के समय बुद्धि की परख की जा सकती है क्योंकि बिम्बा वस्तु व्यक्ति को बुद्धि द्वारा ही मार्ग-दर्शन मिलता है । वन के बाटे के बरत रंगी की परख होती है क्योंकि बनामाव में भी लची छाव से तो बरतका दिन पक्का समझना चाहिये । बुरे समय में सगे-सम्बन्धियों की परख होती है और ठाकुर की परख कर्म से होती है ।

(२८४)

तासों ही कछु पाइये कीजे जाकी यास ।  
 रीते सरवर पर गए, कैसे कुबे पिपास ॥

अर्थ—जिससे कुछ प्राप्ति हो सके उससे किसी वस्तु की चाछा करना उचित है क्योंकि पानी से रिक्त तालाब से प्यास भी दूति करना व्यर्थ हो होता ।

( ११४ )

(२८५)

सोहे की न लोहार की रहिमन कही बिचार ।

सा हनि मारे सोस पे, ताही की लसवार ॥

अर्थ—रहीम बिचार करके कहते हैं कि लसवार न तो सोहे की कही जायेगी और न लोहार की यणितु लसवार उस वीर की ही कही जायेगी जो बीरता से धिर पर मार कर प्राणों का धन्द कर देता है ।

(२८६)

मनि मानिक मैंहो कियो, सँहये तुन जल नाज ।

रहिमन घाले कहत हैं राम गरीब पेबाख ॥

अर्थ—मणि-मानिक जैसी मयीरों के बिनाश की वस्तुओं को तो मजबूत ने मर्हना कर दिया है और तीन प्राणिकों और बरीब मनुष्यों के काम में घाले वाली वस्तुएँ—बाख जल और घाल को सस्ता ही रखा है ताकि वे प्राणिकों के यणनी सुवा तुष्टि कर जीवन-निर्वाह कर सकें । कबिबर रहीम इस बात को इन्स्टिपत करते हुए कहते हैं कि इसीनिज् ठीक ही मजबूत को बरीबों का ध्यान रखने वाले बीनबन्धु नाम से सम्बोधित किया जाता है ।

भावसाम्य— भुलसी जाने मुनि समुक्ति, कृपासिन्धु रघुपञ्च ।

मईहे मनि कंचन किये, सोमे बग जल नाज ॥

(२८७)

जल बारा घट सुतल सों लया रहे मित बिल ।

नहि रहीम कोऊ मख्यौ माढ़े बिल को मित ॥

अर्थ—सम्पत्ति की ओर लम्पानों में ही मनुष्य का मन सबैब रमा रहता है लेकिन निपत्ति काल में काम इनमें से घाले वाला कोई भी इन्स्टिगोवर नहीं होता ।

(२८८)

रहिमन बिघाह बिमायि हैं सकहु तो जाऊ बचाय ।

पौयन बैड़ी परत है डोल बचाय बचाय ॥

धर्म—कविवर रहीम कहते हैं कि विवाह एक व्याधि के समान है—इस व्याधि से बच सकते हो तो घमस्य बचो । होत बचा-बचाकर धीरे धीरे निकल कर मनुष्य के पैरों में बेकियाँ बाँध दी जाती हैं और वह घामस्य बन्धन में रह जाता है ।

( २८६ )

रहिमन सूची नाम से व्याधा होत उखीर ।  
फरबी मीर न हू सकै, टेढ़े की तासीर ॥

धर्म—रहीम कवि कहते हैं कि सूची नाम ही बनकर छोटी है क्योंकि घटरंग के खेल में सूची नाम बनकर ही व्याधा बनकर एक हो जाता है और फरबी टेढ़ा बनने के कारण मीर भी नहीं बन पाता ।

( २८७ )

रहिमन लोखे ऊँच में जहाँ रसम की कामि ।  
जहाँ गंठ तहँ रस नहीं, यहीं प्रीति में हानि ॥

धर्म—रहीम कहते हैं कि यहाँ रस की कामि है किन्तु उसकी गंठ में जहाँ कि रस अधिक होगा चाहिये वहीं पर रस नहीं होता । ऐस ही प्रीति में गंठ पड़ जाने पर प्रेम नहीं रहता ।

( २८८ )

जो बियया संतन लखी मूढ़ छाहि सिपटात ।  
क्यों मर बाँसत बमन कार, स्वाम स्वाह सो जात ॥

धर्म—सन्त मनुष्यों ने जिन विषय बातनाथों का त्याग कर दिया है उन्हीं विषय-बातनाथों में मूढ़ मनुष्य लिप्त होते हैं । जैसे कि मनुष्य जिसे भजन करके त्याग देता है—कुत्ते छोड़े बड़े ही स्वाद से ग्रहण करते हैं ।

( २८९ )

हरी हरी कबना करी सुनी जो सब ना डेर ।  
इग इग भरी जतावरी, हरी करी की डेर ॥

धर्म—कविवर रहीम भगवान् की बलबलसमता का परिचय देते हुए कहते हैं कि हरि ने प्रार्थना सुन करणा करके पुनः का हरसु किया । जब मजराज पर प्राणों का संकट पड़ गया था तो उसकी करुणाद पुकार को सुनकर वे उठा बसे हीकर माये वे और मजराज के पुनः को हर लिया था यर्थात् उसके संकट का निवारण कर दिया था ।

विशेष—पौराणिक कथा है कि मजराज स्नान करते समय नगर के चन्दुल में पड़े गया था और उसके प्राणों पर जोर संकट था गया था । उस समय हीन होकर मजराज ने भगवान् को पुकारा था और भगवान् विष्णु बल की कातर पुकार सुनकर तत्क्षण मजराज का संकट दूर करने लगे थे ।

मन्त्रद्वार—मनुप्राप्त, पुनःस्तिष्ठाया और मयक ।

